मुसाफ़िर हूँ यारो

हर कदम एक कहानी है हर मोड़ एक अनुभव है
मज़िल तो बस बहाना है

काव्य संग्रह

जय प्रकाश 'जय'

BlueRose ONE .com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Jai Prakash 'Jai' 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.



For permissions requests or inquiries regarding this publication,
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-81-6744-865-1

Cover Design: Ajay Dhyani
Typesetting: Sagar

First Edition: October 2026

समर्पित

स्नेहिल, प्रेरक एवं मार्गदर्शक

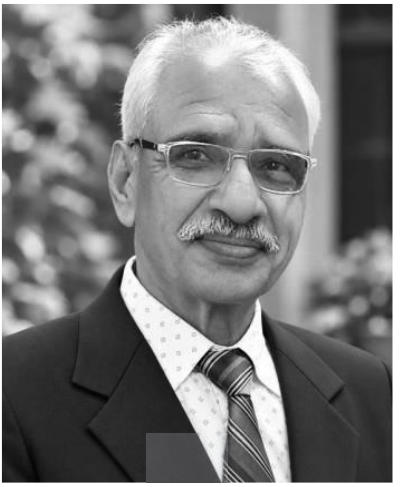

सबसे बड़े भैया

श्री जगदीश चन्द्र यादव

प्रेम,संकल्पशक्ति और जागरण का मुखर स्वर : 'मुसाफ़िर हूँ यारो'

मनुष्य के हृदय की अनुभूतियों का सहज प्रकटीकरण कविता है। हृदय की भावनाओं का उद्रेक शब्दों के माध्यम से कविता में ढल जाता है। काव्यानंद को रस कहा गया है। इस तरह कविता का संबंध रसानुभूति से है । इसी दृष्टि से **साहित्य दर्पण** में आचार्य विश्वनाथ ने कहा - **रसात्मकं वाक्यं काव्यम्** अर्थात रस युक्त वाक्य ही काव्य है। कविता में भावों, विचारों और कल्पना का सुंदर समन्वय देखने को मिलता है। मनुष्य की संवेदना के साथ कविता का सम्बन्ध कब से रहा है? इस प्रश्न पर विचार करते हुए कहा जा सकता है कि कविता मनुष्य की आदि सहचरी है। मानव- हृदय की करुणा से उद्भूत कविता व्यक्ति की भावनाओं का शमन तो करती ही है ,साथ ही इसका एक सिरा लोकमंगल के भाव से भी जुड़ता है। तभी गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा - **कीरति भनिति भूत भलि सोई। सुर सरि सम सब कँह हित होई ।** जैसे पर्वत- शिखर से उमड़ने वाली नदी अपनी समुद्र पर्यंत यात्रा में जीवनदायिनी बनी रहती है, इसी तरह संवेदनशील मनुष्य के हृदय से उद्भूत कविता भी भावनाओं की शीतलता और विचारों की उदात्तता से लोकमंगल के भाव से संपृक्त बनी रहती है।

'मुसाफ़िर हूँ यारो' जयप्रकाश 'जय' का नया काव्य संग्रह है, इससे पूर्व इनके दो काव्य संग्रह **'चलो इन्द्रधनुष हो जाएं'** तथा **'दिल चाहता है'** प्रकाशित हो चुके हैं । जयप्रकाश 'जय' के इस काव्यसंग्रह की कविताओं में जीवन के उत्सव का राग है । प्रेम की पीड़ा है, वंचित वर्ग के अभावों की कसक है और अभिप्रेरक तत्व भी उनकी कविताओं का प्रमुख स्वर है। **अपना वजूद** कविता में कवि की संवेदना का इतना विस्तार है कि वह पीड़ा को व्यक्तिगत न मानते हुए दु:ख को मानवता की साझी पीड़ा बताता है –

दुख किसी का व्यक्तिगत नहीं होता
वह तो मानवता की साझी पीड़ा है
जब तक हम पराया समझते रहेंगे
तब तक यह संसार अधूरी क्रीड़ा है
इंसानियत का धर्म बस इतना ही है कि
हम स्वयं से निकलकर सर्व तक जाएं
किसी और के चेहरे की मुस्कान में
अपना असली वजूद ढूंढ़ लाएं ।

कवि की दृष्टि भौतिक सुख सुविधाओं के कारण मनुष्य के भीतर उत्पन्न हुए खालीपन को भी देख लेती है । वह इस तथ्य को बखूबी समझता है कि भोगवाद के दैत्य ने मनुष्य के भीतर की आत्मीयता और संबंधों की ऊष्मा को नष्ट कर दिया है। प्रेम के खालीपन ने हमारे त्योहारों की ऊष्मा को भी ठंडा कर दिया है,जीवन से उल्लास गायब हो गया है। तकनीक और यंत्र के सानिध्य ने मनुष्य को संवेदनहीन और यंत्रवत ही बना दिया है । तब वह कहता है –

होली की टोलियां गुम हैं
गुम है दिवाली का वह प्यार
अब मोबाइल की पर्दों में ही
सिमट गया है हर त्योहार।

कवि का संवेदनशील मन युद्धों की विभीषिका से दुखी है। आदिम युग से लेकर अब तक इतने रक्तपात के बाद भी आदमी के भीतर के पशु की रक्त-प्यास अभी शांत नहीं हुई है । युद्ध में दो देशों के राष्ट्राध्यक्षों के अहंकार आपस में लड़ते हैं। दो देशों में एक जीतता है और एक हारता है किंतु एक और बड़ी पराजय होती है वह होती है मनुष्यता की। मनुष्यता की इस पराजय की कीमत पीढियां चुकाती हैं। इस सम्बन्ध में कवि लिखता है –

एक युद्ध से सभ्यताएं नष्ट हो जाती हैं
सरहदों की लकीरें जब लहू से बांधी जाती हैं
तब सभ्यताएं दम तोड़ती हैं
सदियां पीछे धकेली जाती हैं।

काव्य संग्रह की कविताओं में रचनाकार का मन प्रकृति- चित्रण में भी खूब रमा है। प्रकृति के मनमोहक सौंदर्य से कवि का मन आह्लादित होता है,साथ ही कवि प्रकृति - पर्यावरण के क्षरण की चिंता भी व्यक्त करता है -

नदियां बहतीं कल-कल कर
सागर से मिलने की चाह में
हवाएं बहती सन - सन कर
खुशबू बिखेरती हैं राह में
नीला अंबर ,धरती हरी
कुदरत का है अनुपम दान
ओ इंसान तू इसे बचा
प्रकृति है जीवन का आधार !

संग्रह की कविताओं में राष्ट्रीय भाव भी अभिव्यक्त हुए हैं। कवि का मन अपनी मातृभूमि के प्रति पूर्णत: समर्पित है। सनातन भाव धारा का यह प्रवाह संग्रह की बड़ी विशेषता है–

आओ मिलकर अलख जगाएं
जन-जन में अभिमान भरें
पुण्य -सलिला इस वसुंधरा का
आओ हम जयगान करें ।
गंगा - यमुना की धाराओं से
जिसका आंचल पावन है
ऋषि मुनियों की तपोभूमि यह
स्वर्ग से भी मनभावन है।

कवि की सूक्ष्म दृष्टि समाज की हर विसंगति पर पड़ती है। कबीर का कथन है - साधो देखा जग बौराना। सांची कहें तो मारन धावै झूठे जग पतिआना। इस काव्य संग्रह के कवि ने भी जग की बौराई दुष्प्रवृत्ति पर करारा प्रहार किया है । कर्म की शक्ति से बेखबर भीड़ लोभ और लालच से ग्रसित होकर याचक की भांति किसी के वाक् चातुर्य से भ्रमित और विवेकहीन होकर अंधानुकरण करने लगती है । भ्रामक वाग्जाल में फंसकर भीड़ दबी जाती है,कुचली जाती है। हादसे होते हैं। सरकार जांच करती है। फाइलों पर मुआवजे स्वीकृत होते हैं ,लेकिन घटना से कोई सबक नहीं लिया जाता ,सिवाय इसके कि शासन नए हादसे की प्रतीक्षा में लग जाता है। फिर एक वाग्जाल फैलाया जाता है। फिर वही हादसा घटित होता है –

आंसू, लाशें,अर्थियां
श्मशान में राख बनते लोग
जिंदगियां मुआवजे में बदल जाती हैं
जांच, दोषारोपण न्यायालय में
चलती रहती है बहस- दर- बहस
भूल जाते हैं लोग और जिम्मेदार
नया हादसा होने तक चलती रहती हैं अंध श्रृद्धाएं
हर दौर में बिना सबक के।

रचना धर्मी हमेशा वंचितों और शोषितों के साथ खड़े दिखाई देते हैं। इस संग्रह का कवि भी मेहनतकश मजदूरों के पक्ष में खड़ा है। संसार में सारे सुंदर निर्माण करने वाले हाथ कैसे सुविधाओं से वंचित रह जाते हैं? वह भले ही तंग गलियों में रहते हैं, फटे कपड़े पहनते हैं लेकिन वे सुंदर महलों और मनोहर पोशाकों के सर्जक हैं। कवि उन्हें अपने शब्दों से इस प्रकार सम्मानित करता है -

पसीने की स्याही से अपनी तकदीर लिखता है
वह पत्थर को काटकर नई तस्वीर लिखता है
न थकन की कोई भाषा
न विश्राम का कोई नाम
उसकी रग - रग में बसा है
बस कर्म का पैगाम
ए दुनिया! रुक कर जरा उसे सलाम तो कर
जिसने संवारा है ये ज़हां उसे प्रणाम तो कर!

इस प्रकार जयप्रकाश जय की कविताओं में वर्तमान की धड़कन साफ सुनी जा सकती है। वर्तमान की विद्रूपताएं, अतीत का गौरव और सुंदर भविष्य की आश्वस्तिपूर्ण कल्पनाएं,अदम्य जिजीविषा, जागरण और अभिप्रेरणा के स्वर– ये सब संग्रह की कविताओं को पठनीय बनाते हैं। कविताओं में कहीं अतीत की मधुर स्मृतियां है, तो कहीं आज के मनुष्य के भीतर का खालीपन है, इन सब के बावजूद संग्रह की कविताओं में प्रेम, आस्था, विश्वास और जीवन को संपूर्णता में जीने की ललक भी अभिव्यक्त हुई है।

तमाम तरह के मानवीय संबंधों के बिखराव ,भीतर की रीतती ऊष्मा और खालीपन के बाद भी समस्याओं से जूझने, अपराजेय बने रहने और सुंदर भविष्य के प्रति आशान्वित भावों की अभिव्यक्ति भी कविताओं में हुई है। कवि के भीतर की सकारात्मकता और प्रेमानुभूति इस नीरस समय को भी सरस और जीने योग्य बनाए रखती है । विषम परिस्थितियों से जूझने की अदम्य रचना -शक्ति संग्रह की कविताओं में दिखाई देती है। संग्रह की कविताओं के अनेक रंग हैं। फिर भी संकल्प शक्ति ,जागरण और

अभिप्रेरणा का स्वर इन कविताओं में बहुत गहरा है।भाषा सरल किन्तु प्रवाहपूर्ण है। आशा है, कवि के पूर्व संग्रहों की भांति यह काव्य संग्रह भी सुधी जनों और काव्यप्रेमियों द्वारा समादृत होगा। जय प्रकाश 'जय' को अनंत शुभकामनाओं सहित ...

-डॉ.सुधीर कुमार शर्मा
प्रोफ़ेसर
हिन्दी विभाग
महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर
स्वशासी महाविद्यालय ,भोपाल
(मो.6261273564)

कविताएं भी रचती हैं जीवन - आशीष दशोत्तर

कविता संवेदनशील मनुष्य की पहचान है । वस्तुत: हर व्यक्ति के भीतर एक कवि मौजूद होता है , जो उसे सुख में ख़ुश होने और दु:ख में ग़मगीन होने का सलीका सिखाता है । भीतर का वह कवि किसी की पीड़ा को देख द्रवित होता है । किसी की मुस्कान को देख ख़ुश होता है । वह कवि जीवन के अंतर्विरोधों को महसूस करता है। वह समाज के बीच मौजूद प्रवृत्तियों की पड़ताल करता है । वह निरंतर बढ़ते समाज के प्रति चिंतित होता है। वह निराश मन में आशा का संचार करने की सीख देता है। उसके भीतर के कवि को बाहर लाना बहुत मुश्किल है । जो ऐसा कर पाते हैं उनकी अभिव्यक्ति काग़ज़ पर उतरती है और वह सीना-दर-सीना सफर करते हुए आगे बढ़ती जाती है । अपने भीतर के कवि को जगाने का कार्य कवि श्री जयप्रकाश 'जय' ने भी किया है।

'मुसाफ़िर हूँ यारो' कविता संग्रह में उनके भीतर से एक अलग तरह का कवि मुखरित होता है। यह मुखरित कवि अपने देश की बात करता है । अपनी ज़मीन की बात करता है, और फिर इस ज़मीन पर पनपत्ति प्रवृत्तियों की बात करता है । कवि जयप्रकाश 'जय' प्रकृति के क़रीब जाते हैं । वे इस प्रकृति में मनुष्य द्वारा पैदा की जा रही विकृतियों की बात करते हैं । वे चाहते हैं की फूलों की ख़ुशबू को कोई न चुराए नहीं। उगती सुबह की रौनक कोई छीन न ले । रात की सुहानी छंटा कहीं ख़त्म न हो जाए । ऐसा कहते हुए उनके भीतर का कवि मनुष्यता के सामने खड़े हो रहे संकटों की पड़ताल करता है और यह उम्मीद करता है कि अपने स्वार्थ के लिए मनुष्य प्रकृति को अपनी तरह नहीं बनाएगा।

अगर नदी , पेड़ ,पहाड़ , फूल ,
आकाश ,बादल, पानी
धर्म और जातियों में बढ़ गए होते
तो शायद नदी बहने से पहले पूछती-

तुम्हारा नाम क्या है ?
और प्यासे होठों को उनकी पहचान देखकर ही जल देती ।
पेड़ अपनी छाया का हिसाब रखते
किसी को धूप, किसी को साया
किसी को फल, किसी को कांटे
जाति और मजहब के तराजू पर तौलते।

जयप्रकाश जी अपने संग्रह की शुरुआत देश के प्रति समर्पित रचना से करते हैं। यह देशभक्ति मातृभक्ति भी है और उस जननि की भक्ति भी , जिसने हर इंसान को जन्म दिया। उनके यहां देश सिर्फ़ देश न होकर भारत माता के रूप में हर स्त्री का चित्रण है। वे स्त्री विमर्श की बड़ी बातें नहीं करते लेकिन पौराणिक चरित्रों के माध्यम से स्त्री द्वारा हर दौर में सहन की गई पीड़ाओं का ज़िक्र करते हैं। वे चाहते हैं कि स्त्री के प्रति दोयम दर्जे का व्यवहार न हो। उनकी कविताएं, उर्मिला : विरह और त्याग की मूरत, कैकई : नियति का कठोर वरदान, में इन चरित्रों के माध्यम से उनके उजले और स्याह पक्ष को सामने रखते हैं और पितृसतात्मक समाज के सामने यह प्रश्न रखते हैं कि स्त्री आख़िर कब तक इस तरह की यातनाएं सहेंगी।

एक रचनाकार अपने समसायिक प्रश्नों से भी जूझता है। ये प्रश्न भी उसके भीतर उथल-पुथल करते हैं । जयप्रकाश जी के यहां भी सामयिक मुद्दों पर कविताएं सामने आती हैं । पूरी दुनिया इस समय कई तरह के युद्धों का सामना कर रही है। युद्ध मनुष्य के लिए ही नहीं मनुष्यता के लिए भी ख़तरनाक है। युद्ध से किसी का भला नहीं होता । इस संदेश को जयप्रकाश जी भी अपनी रचना में व्यक्त करते हैं।

युद्ध नहीं है प्रतीक किसी भी
प्रगति और विकास का
यह तो अंत है मानवता के
रिश्तों और विश्वास का।

मानवता के सामने खड़े प्रश्नों की इन कविताओं में पड़ताल की गई है । जयप्रकाश जी अपने परिवेश को नहीं छोड़ते। अपने बचपन के दिनों , अपने आसपास के वातावरण

और अपने मित्रों के माध्यम से वे समय के बदलते स्वरूप पर कटाक्ष भी करते हैं । वे मनुष्य द्वारा की जा रही प्रगति के साथ छूटते जा रहे हैं मूल्यों की चिंता भी करते हैं । वह उस मनुष्य की चिंता भी करते हैं जो सदियों से दबा कुचला है । जिसके सामने आज भी रोज़ी-रोटी का प्रश्न खड़ा है। जिसके हाथ आज भी श्रम करने को बाध्य हैं ।जिसके लिए विकास का कोई अर्थ नहीं है। ऐसे श्रमशील मनुष्य के लिए वे कहते हैं-

पसीने की स्याही से
अपनी तक़दीर लिखता है ,
वह पत्थर को काटकर
नई तस्वीर लिखता है।
न थकन की कोई भाषा
न विश्राम का कोई नाम ,
उसकी रग-रग में बसा है
बस कर्म का पैग़ाम।

आज हमारा समाज व्यक्ति केंद्रित हो गया है। परिवार निरंतर टूट रहे हैं । व्यक्ति अपने आप में सिमट कर रह गया है। ऐसी स्थिति में हर व्यक्ति अपना आपको सर्वगुणसंपन्न मानने लगा है । कवि की चिंता यह है कि हर व्यक्ति अगर सर्वगुण संपन्न होगा तो वह अपने अलावा सभी में कोई ना कोई दोष ढूंढेगा। आज हो भी यही रहा है । हर व्यक्ति को दूसरों में कमियां नज़र आ रही है, लेकिन वह अपनी कमियां नहीं देखना चाहता। जयप्रकाश जी ऐसे मनुष्य के प्रति भी चिंता व्यक्त करते हैं । वे उस शख़्स को आईना दिखाना चाहते हैं जो मग़रूर है , जिसकी दुनिया सीमित है , जो अपने आप के अतिरिक्त कुछ देखना नहीं चाहता।

दूजे पर दे दाग़ दिखाई
अपना दामन देखें कौन ?
दूजे में तो ऐब निकाले
अपने अवगुण देखें कौन ?
अपनी जगह पर सब सच्चे तो
जग में फिर झूठा है कौन?

एक कवि होने के साथ जयप्रकाश जी मोटिवेशनल स्पीकर भी हैं । वे जानते हैं कि यह दौर निराशा का है । आज का युवा हताश है । उसके सामने बहुत सारे संकट खड़े हैं ।उसे रोज़गार नहीं मिल रहा है । परीक्षाओं के नाम पर उसे छला जा रहा है। उसे बहलाया- फुसलाया जा रहा है और अकर्मण्यता की तरफ धकेला जा रहा है । ऐसे में आज का युवा निराश होकर अपना जीवन ख़त्म करने की तरफ प्रवृत्त हो रहा है । एक जागरूक नागरिक के रूप में यहां कवि जय प्रकाश 'जय' ऐसे निराशा युवाओं को हौसला प्रदान करते हैं। वे अपनी कविताओं के माध्यम से यह विश्वास दिलाते हैं कि अभी सब कुछ ख़त्म नहीं हुआ ,बहुत कुछ शेष है ,जिसके सहारे जीवन को बेहतर बनाया जा सकता है।

नाकामियों में छुपे होंगे कई सबक
तुम सच्चाई से नज़रें चुराना नहीं ।
क़दम दर क़दम देने होंगे इम्तिहान
इम्तिहानों से कभी घबराना नहीं।

एक कवि धड़कते हुए दिलों की बात करता है। ठहरे हुए पानी के बजाए बहते हुए दरिया में वह जीवन के स्वर खोजता है । वह पत्थरों की दुनिया में आईनों की बात करता है। वह वर्तमान को संवारने के लिए इतिहास की प्रमाणिकता पर ज़ोर देता है । वह सुखद भविष्य की नींव रखने की भी बात करता है। कवि जयप्रकाश जी के यहां भी ऐसी ही चिंताएं हैं। वे कहते हैं -

इतिहास
पत्थरों से कम
इंसानों की स्मृतियों से
ज़्यादा लिखा जाता है।

इस तरह जयप्रकाश जी की कविताएं स्मृतियों और हक़ीक़त के धरातल पर बखूबी चलती नज़र आती हैं । इन कविताओं में बहुत सादगी है। ये कविताएं बहुत बड़ी बातें नहीं करतीं लेकिन जीवन के दर्द को समझती हैं । कवि ने जीवन के कई रंग देखे हैं जो उनके कविताओं में नज़र आते हैं । ये कविताएं आपको बीच राह में नहीं छोड़ती बल्कि मंज़िल तक ले जाती हैं । ये कविताएं निराशा के दौर में आशा की बात करती हैं ।

संग्रह की कविताएं जब पाठकों की नज़र से गुजरेगी तो वह भी इन कविताओं के ताप को महसूस अवश्य करेंगे।

-12/2, कोमल नगर
रतलाम -457001(म.प्र.)
मो.9827084866

अपनों से अपनी बात.....

'मुसाफ़िर हूँ यारो' : गतिशील, सक्रिय जीवन की कहानी

शायद हर सफर की शुरुआत एक दिन घर से निकलने से होती है।

लेकिन कुछ यात्राएँ ऐसी होती हैं, जिनमें घर से निकलना केवल एक जगह से दूसरी जगह जाना नहीं होता, बल्कि धीरे-धीरे अपने आपको खोजने की यात्रा बन जाता है।

मेरी यात्रा भी कुछ ऐसी ही रही।

बचपन में शायद यह एहसास नहीं था कि जीवन मुझे इतना लंबा सफर तय करवाएगा। मात्र चौदह वर्ष की उम्र में, आठवीं कक्षा पास करके, आगे की पढ़ाई के लिए अपने गांव चिकलाना से लगभग बीस किलोमीटर दूर जावरा शहर आ गया। उम्र छोटी थी, लेकिन परिस्थितियों ने आत्मनिर्भर होना जल्दी सिखा दिया। वहीं अपने हाथों से रोटी-सब्जी बनाना सीखा, पढ़ाई की, जीवन को थोड़ा-थोड़ा समझना शुरू किया।

स्कूल की पढ़ाई पूरी हुई और लगभग दो वर्ष कॉलेज में पढ़ाई की। इसी दौरान पहली सरकारी नौकरी मिल गई।

लेकिन वह नौकरी मंजिल नहीं थी—वह तो केवल यात्रा की शुरुआत थी। फिर प्रयासों का सिलसिला चलता रहा। एक के बाद एक सात नौकरियाँ मिलीं। कुछ को अपनाया, कुछ को छोड़ा और हर अनुभव से कुछ नया सीखा। शायद नौकरी बदलने से अधिक मैंने अपने भीतर के आदमी को बदलते और विकसित होते देखा। घर से निकला था पढ़ने और आगे बढ़ने के लिए, लेकिन धीरे-धीरे ऐसा समय भी आया जब अपने ही घर में मेहमान-सा हो गया।

नौकरियाँ बदलीं, पद बदले, गाँव बदले, शहर बदले, घर बदले; लेकिन कोई शहर, कोई ओहदा और कोई घर स्थायी नहीं रहा। जीवन चलता रहा और मैं भी चलता रहा। मेरे कार्यक्षेत्र ने मुझे मध्यप्रदेश के अनेक हिस्सों से परिचित कराया—रतलाम, मंदसौर,

नीमच, शाजापुर, इंदौर, भोपाल, धार, नर्मदापुरम, बैतूल, हरदा, शहडोल, सीधी, रीवा, जबलपुर, सागर, अनूपपुर, उमरिया और सिंगरौली मेरे जीवन की यात्रा के महत्वपूर्ण पड़ाव बने।

सरकारी दायित्वों ने प्रदेश की सीमाओं से बाहर भी पहुँचाया। दिल्ली, हैदराबाद, उदयपुर, भुवनेश्वर और चंडीगढ़ तक की यात्राएँ हुईं। इन यात्राओं में केवल स्थान नहीं बदले, बल्कि दृष्टि बदली, अनुभव बढ़े और जीवन को देखने का नजरिया विस्तृत हुआ।

कभी सड़कें साथी बनीं, कभी रेल की खिड़की से गुजरते दृश्य; कभी किसी नए शहर का कमरा अपना घर लगा, तो कभी वर्षों बाद लौटकर भी अपने ही शहर में सब कुछ थोड़ा बदला-बदला महसूस हुआ।

शायद इसीलिए आज पीछे मुड़कर देखता हूँ तो लगता है—

मैंने शहरों की यात्रा कम और लोगों की यात्रा अधिक की है।

इन वर्षों में हजारों लोगों और विद्यार्थियों से संवाद हुआ। मैंने जो कुछ अपने भीतर था, उसे बाँटने की कोशिश की और उनसे उससे कहीं अधिक पाया। मैंने उन्हें कुछ दिया होगा—कुछ शब्द, कुछ विचार, कुछ अनुभव, कुछ हौसला; लेकिन उन्होंने मुझे बहुत कुछ दिया—विश्वास, प्रेम, ऊर्जा, सीख और जीवन को देखने की नई दृष्टि।

मेरा मानना है कि शिक्षक, अधिकारी, वक्ता या लेखक होने से पहले हम सभी एक-दूसरे के जीवन के यात्री होते हैं। कोई कुछ कदम हमारे साथ चलता है, कोई वर्षों तक, और कोई थोड़ी-सी मुलाकात में ही हमारे भीतर कोई ऐसी बात छोड़ जाता है जो जीवन भर साथ रहती है।

मेरे जीवन को बनाने और सँवारने में ऐसे अनेक लोगों का योगदान रहा है। माता-पिता, परिवार, मित्र, सहकर्मी, वरिष्ठ, विद्यार्थी और वे अनगिनत लोग जिनसे रास्ते में मुलाकात हुई—सबने मेरी यात्रा को किसी न किसी रूप में प्रभावित किया।

किसी ने हाथ पकड़कर चलना सिखाया, किसी ने गिरकर उठना सिखाया,

किसी ने आगे बढ़ने का साहस दिया, तो किसी ने अपनी दूरी से आत्मनिर्भर होना सिखाया।

आज जब अपने जीवन के इन पड़ावों को एक साथ देखता हूँ तो महसूस होता है कि मंजिल शायद कोई एक जगह थी ही नहीं। हर पड़ाव अपने आप में एक मंजिल था और हर मंजिल अगले सफर की शुरुआत।

इसी निरंतर यात्रा से **'मुसाफ़िर हूँ यारो'** का जन्म हुआ।

इस संग्रह की कविताएँ किसी एक समय, एक शहर या एक परिस्थिति की उपज नहीं हैं। इनमें उस बच्चे की स्मृतियाँ भी हैं जो चौदह वर्ष की उम्र में घर से निकला था; उस विद्यार्थी की जिज्ञासा भी है जिसने नए शहर में अपने हाथों से जीवन सँभालना सीखा; उस कर्मचारी का संघर्ष भी है जिसने लगातार अवसर तलाशे; उस यात्री की थकान भी है जिसने असंख्य रास्ते तय किए; उस वक्ता की आवाज भी है जिसने हजारों विद्यार्थियों से संवाद किया; और उस इंसान की संवेदना भी है जिसने रास्ते में मिले लोगों से बहुत कुछ पाया।

इन कविताओं में मेरे जीवन के कुछ सच हैं, कुछ सवाल हैं, कुछ रिश्ते हैं, कुछ बिछोह हैं, कुछ उम्मीदें हैं और कुछ ऐसे क्षण हैं जिन्हें शब्दों में बाँधना जरूरी लगा।

मैंने जीवन को हमेशा एक खुली किताब की तरह पढ़ने की कोशिश की है। हर शहर ने एक पन्ना जोड़ा, हर नौकरी ने एक अध्याय, हर व्यक्ति ने कोई पंक्ति और हर अनुभव ने कोई अर्थ।

और शायद कविता उन्हीं अर्थों को बचाए रखने का एक माध्यम है।

इसलिए **'मुसाफ़िर हूँ यारो'** मेरे लिए केवल कविता-संग्रह नहीं है। यह मेरे जीवन की उन पगडंडियों की स्मृति है, जिन पर चलते हुए मैं यहाँ तक पहुँचा हूँ।

मैं नहीं जानता कि इस यात्रा में मैंने कितना पाया और कितना खोया। लेकिन इतना जरूर जानता हूँ कि चलते रहने ने मुझे बहुत कुछ दिया है।

आज भी लगता है—

घर से निकला था मंजिल की तलाश में,
रास्ते मिलते गए और कारवाँ बनता गया।

शहर बदलते गए, लोग बदलते गए,
मगर भीतर का मुसाफिर चलता रहा।

और शायद आगे भी चलता रहेगा...

क्योंकि—

मुसाफिर का काम मंजिल पर रुक जाना नहीं,

बल्कि हर पड़ाव के बाद

एक नई राह तलाशना है।

मेरे इस सफर में जो भी लोग कहीं न कहीं मेरे साथ चले, जिन्होंने मुझे कुछ दिया, कुछ सिखाया, मुझे बेहतर बनाया—उन सभी के प्रति मेरे मन में गहरी कृतज्ञता है।

यह पुस्तक उन्हीं यात्राओं, अनुभवों और रिश्तों की स्मृति है।

आप इसे केवल कविताओं की तरह न पढ़ें,

यदि संभव हो तो इसे एक मुसाफिर की डायरी की तरह पढ़ें।

शायद किसी पन्ने पर आपको
अपना कोई रास्ता मिल जाए,
कोई पुराना शहर याद आ जाए,
कोई अपना चेहरा दिखाई दे जाए,
या फिर अचानक यह एहसास हो—

“अरे, यह मुसाफिर तो मेरी ही तरह है...”

यही इस पुस्तक की सबसे बड़ी उपलब्धि होगी।

रविवार, 18 अक्टूबर 2026

आपका अपना

(जय प्रकाश ‘जय’)

अनुक्रमणिका

1- आओ भारत भूमि का जयगान करें 1
2- काँटों वाली राहों पर भी, फूलों जैसे महकें हम 3
3- युद्ध: मानवता के खिलाफ एक अपराध 5
4- बदल गया वो मेरा गाँव 8
5- प्रकृति की महिमा 10
6- किसी दिन... 11
7- अपना वजूद 12
8- मज़दूर: राष्ट्र का निर्माता 14
9- हादसे दर हादसे -अंध श्रद्धा का दौर 16
10- अहसान समझ पाता है कौन? 18
11- जग में फिर है झूठा कौन? 19
12- तुम ज़िन्दगी से भाग जाना नहीं... 20
13- आज फिर... 21
14- चलो, इस जहाँ को सुन्दर बनायें 23
15- उठो मेरे प्रिय हृदय 25
16- एक ही तो जीवन है 27
17- ख़ामोशी, गुफ़्तगू करती है 28
18- ज़िन्दगी - कभी धुप कभी छाँव 29
19- फिर वही बात 30
20- मिले जो पल ये सुहाने, संभाल कर रखना 32
21- आदमी की पहचान 33
22- मुसाफ़िर हूँ यारो 34
23- फिर किसी दिन 35
24- शिलालेख 36
25- अभी हाथ खुलने दो 39
26- मैंने उसे जाने दिया 40

27- भीड़ 41
28- ये ज़रूरी तो नहीं 43
29- कोई घर रोक नहीं पाया मुझे 44
30- कुछ नहीं का मतलब, बहुत कुछ होता है 48
31- मन को उड़ना है अगर, होंसलो के पंखों से उड़ो 50
32- टूटे हुए सपनों से नये सपने जन्म लेते हैं 52
33- प्रेम : एक मधुर एहसास 53
34- एक दिन 54
35- फिर भी । 55
36- ज़िन्दगी की राहें 56
37- कोई यहां स्थाई नहीं 58
38- कभी तन्हाइयों में 60
39- नई सुबह की तलाश 61
40- हर आदमी यहां आईना लेकर खड़ा है 63
41- अक्सर मैं चुप रहकर जीत जाता हूँ 64
42- शहर का दर्द 65
43- आदमी कहाँ है, ये सवाल निकल पड़ा है 66
44- कई रात सोया नहीं, कई रात जागा नहीं 67
45- बूंद का सुहाना सफ़र 68
46- उपेक्षित आदमी 70
47- कुछ तो लोग कहेंगे 71
48- तो कोई बात बने 72
49- गर प्रकृति धर्मों में बंट गई होती 73
50- मुझे ऐसा जहाँ चाहिए 76
51- नींद के उस पार 78
52- पुरुष की बेबसी 81
53- महाभारत एक लघु कथा 84
54- उर्मिला: विरह और त्याग की मूरत 86
55- कैकेयी: नियति का कठोर वरदान 88

1- आओ भारत भूमि का जयगान करें

आओ मिलकर अलख जगाएं,
जन-जन में अभिमान भरें,
पुण्य सलिला इस वसुंधरा का,
आओ हम सब जयगान करें।

गंगा-यमुना की धाराओं से,
जिसका आँचल पावन है,
ऋषि-मुनियों की तपोभूमि,
यह स्वर्ग से भी मनभावन है।

आओ इसकी पावन माटी का,
तिलक हम ललाट पर धरें,
पुण्य सलिला इस वसुंधरा का,
आओ हम जयगान करें।

उत्तर में रक्षक हिमालय,
दक्षिण में सागर की लहरें,
पूरब-पश्चिम की सीमा पर,
शौर्य के गहरे पहरे ।

कृष्ण की गीता, राम का आदर्श,
यहाँ की अमर कहानी है,
बुद्ध और महावीर की करुणा,
जग-जग ने पहचानी है।

आओ अपनी गौरव-गाथा का,
मिलकर हम बखान करें,
पुण्य सलिला इस वसुंधरा का,
आओ हम जयगान करें।

कई धर्म और कई जातियां,
पर एक हमारी धड़कन है,
विविधता में एकता ही,
इस देश का सच्चा मन है।

खेतों में सोना उपजाते,
वीरों की यह भूमि महान,
सीमा पर जो शीश नवाते,
उन वीरों सदा सम्मान।

आओ तिरंगे की छाया में,
अपना सर्वस्व प्रदान करें,
पुण्य सलिला इस वसुंधरा का,
आओ हम जयगान करें।

अंधकार सब दूर भगाएं,
आओ हम कुछ दीप जलाएं,
भारत माँ के चरणों में,
आओ मिलकर शीश नवाएं ।

2- काँटों वाली राहों पर भी, फूलों जैसे महकें हम

सुख आता है भोर सरीखा,
आँखों में सपने भरता है,
जैसे कोई कोमल पंछी,
मन के आँगन में उतरता है ।

पर वह भी तो मेहमान है,
कल उसको भी जाना है,
धूप खिली है अगर अभी, तो
शाम को लौट ही आना है।

दुःख भी अपना साथी ही है,
जो भीतर तक माँजता है,
एक नए सूरज के खातिर,
अंधियारों को पालता है।

जब रोती हैं आँखें अपनी,
तभी तो गम धुल जाता है,
पत्थर जैसा मन भी देखो,
मोम सा पिघल जाता है।

न कोई दूजा हाथ बँटाए,
न कोई हिस्सेदार यहाँ,
अपने आँसू, अपनी हँसी,
अपना ही संसार यहाँ।

चुपके से सह लेना दुःख को,
हँसकर सुख को बाँटें हम,
काँटों वाली राहों पर भी,
फूलों जैसे महकें हम।

3- युद्ध: मानवता के खिलाफ एक अपराध

यह धरा सिसकती है,
जब बारूद बरसता है,
इंसानियत का चेहरा,
ख़ून से लथपथ होता है।

जीत की ख़ातिर जो
लाशों के ढेर लगाते हैं,
वे भूल जाते हैं कि वे,
खुद को ही मिटाते हैं।

युद्ध नहीं है प्रतीक किसी भी
प्रगति और विकास का,
यह तो अंत है मानवता के,
रिश्तों और विश्वास का।

कहीं माँ की गोद हुई सूनी,
कहीं माँग का सिंदूर गया।
बचपन जो अभी खिलना था,
मलबे में वो दफन हो गया ।

सरहदों की लकीरें जब,
लहू से खींची जाती हैं,
तब सभ्यताएँ दम तोड़ती हैं,
सदियों पीछे धकेली जाती हैं।

महल हों या झोपड़ियाँ,
आग सबको जलाती है,
चीख़ें किसी धर्म या भाषा को
कभी नहीं पहचानती हैं।

जो बम गिराते हैं 'विजय' के,
मद में चूर होकर,
वे क्या देंगे जवाब वो,
मासूमों के कातिल होकर?

शांति की एक बूंद सदा ही,
रक्त की नदियों से भारी है,
प्रेम की बस एक ही पुकार,
नफरत की जंगों पर भारी है।

आने वाली नस्लें हमसे,
ये सवाल न पूछें कि,
क्यों हमीं ने उजाड़े थे,
उनके आशियानें और बगीचे?

युद्ध पराजय है बुद्धि की,
विवेक की और प्यार की,
मानवता ही सच्ची नींव है,
इस सुंदर प्यारे संसार की।

कलम उठाओ अब तो तुम,
तलवारों को म्यान दो,
नफ़रत की इस आग को,
अब एक नई मुस्कान दो।

आओ मिलकर लें प्रण,
अब न कोई युद्ध होगा,
हर हृदय में बुद्ध होगा,
हर मन अब शुद्ध होगा।

4- बदल गया वो मेरा गाँव

बीते कल की यादों में,
जब पीछे मुड़कर देखता हूँ,
धूल भरी उन गलियों में,
अपना बचपन ढूँढता हूँ।
पर अब वो मंज़र बदल गया,
बदल गया वो मेरा गाँव।

कहाँ गईं वो नीम की छैयाँ?
और मिट्टी के वो कच्चे घर,
अपनों की वो दुआएँ।
अब कंक्रीट के जंगल उगे हैं,
छिन गई पेड़ों की छाँव,
बदल गया वो मेरा गाँव।

पनघट पर अब शोर नहीं,
न कुएँ की वो जगत रही,
खेतों की वो सोंधी खुशबू,
अब शहरों की भेंट चढ़ी।
थक गए चलते-चलते पाँव,
बदल गया वो मेरा गाँव।

होली की वो टोलियाँ गुम हैं,
गुम है दीवाली का वो प्यार,
अब मोबाइल के पर्दों में ही,
सिमट गया है हर त्यौहार।
फीका पड़ा अपनत्व का भाव,
बदल गया वो मेरा गाँव।

सुविधाएँ तो बहुत आ गईं,
बिजली, सड़क और ऊँचे द्वार,
पर वो सुकून कहाँ से लाऊँ,
जो मिलता था मिट्टी के पार।
खो गया सादगी का भाव,
बदल गया वो मेरा गाँव।

5- प्रकृति की महिमा

पर्वत के ऊँचे शिखर यहाँ,
बादलों से बातें करते हैं,
झरनों का शीतल जल यहाँ
पत्थरों पर संगीत भरते हैं।

पेड़ों की घनी छाँव में,
पंछी मीठे गीत सुनाते हैं,
भोर की पहली किरण संग,
फूल प्यार से मुस्काते हैं।

नदियाँ बहती कल-कल कर,
सागर से मिलने की चाह में,
हवाएँ बहती सन-सन कर,
खुशबू बिखेरती है राह में।

नीला अंबर, धरती हरी,
कुदरत का है अनुपम दान,
ओ इंसान! तू इसे बचा,
प्रकृति है जीवन का आधार।

न छेड़ तू इस संतुलन को,
जीवन असंतुलित हो जायेगा ,
अगर सुखी रहना है तुझे,
तो बस प्रकृति से प्यार कर।

6- किसी दिन...

किसी दिन,
जब वक्त की मुट्ठी से रेत कम फिसलेगी,
जब उम्मीद की लौ ज़रा और तेज़ जलेगी,
उस दिन हम अपनी अधूरी हसरतों से मिलेंगे,
पतझड़ के बाद फिर से नए फूल खिलेंगे।

किसी दिन...
थकान के बोझ तले ये कंधे नहीं झुकेंगे,
मंज़िल की तलाश में ये कदम नहीं रुकेंगे,
बादलों को चीर कर सूरज फिर मुस्काएगा,
अंधेरों का साया ख़ुद-ब-ख़ुद सिमट जाएगा।

किसी दिन...
वो अनकही बातें जुबां पर आएंगी,
खामोशियां भी कोई गीत गुनगुनाएंगी,
साहिल पर बैठ कर लहरों को हम गिनेंगे,
खोई हुई यादों के साथ हम फिर मिलेंगे।

किसी दिन...
ख्वाबों और हकीकत का फासला मिट जाएगा,
जो खो गया था, वो फिर लौटकर आएगा किसी दिन,
बस उसी 'एक दिन' के इंतज़ार में आज चलते हैं,
उम्मीदों के दीयों को हम दिल में जलाए रखते हैं।

7- अपना वज़ूद

दौड़ती भागती इस भीड़ में,
चेहरों के नकाब गहरे हैं,
हँसी के पीछे छिपे हैं आँसू,
दुखों के पहरे बहुत सुनहरे हैं।1।

हम गुजर जाते हैं पास से अक्सर,
कंधा उचकाकर, नज़रें चुराकर,
जैसे किसी और की आह से,
हमारा कोई वास्ता ही न हो।

किसी की थाली खाली है,
किसी की आँखों में विवशता है,
हम अपने सुखों के घेरे में,
मानो किसी टापू पर सिमटे हैं।

दिखता है हमें फुटपाथ का वह दर्द,
सुनाई देती है उस बूढ़ी माँ की कराह,
पर हमारे कानों में शोर है मतलब का,
और रूह पर चढ़ी है बेरुखी की तह।

दुःख किसी का व्यक्तिगत नहीं होता,
वह तो मानवता की साँझी पीड़ा है,
जब तक हम पराया समझते रहेंगे,
तब तक यह संसार एक अधूरी क्रीड़ा है।

थोड़ा रुकें, थोड़ा सुनें, और सोचें,
किसी के पोंछ कर आँसू तो देखें,
खुद के दुखों का बोझ हल्का होगा,
जब हम दूसरों के गम बाँट कर देखें।

इंसानियत का धर्म बस इतना ही है,
कि हम 'स्व' से निकलकर 'सर्व' तक जाएँ,
किसी और के चेहरे की मुस्कान में,
अपने होने का असली वजूद ढूँढ लाएँ।

8- मज़दूर: राष्ट्र का निर्माता

पसीने की स्याही से,
अपनी तक़दीर लिखता है,
वो पत्थर को काटकर,
नई तस्वीर लिखता है।

न थकान की कोई भाषा,
न विश्राम का कोई नाम,
उसकी रग-रग में बसा है,
बस कर्म का पैगाम।

तपती धूप हो या,
कड़कती ठंड की रात,
वो कंधे पर ढोता है,
अपने सपनों की बारात।

ऊंची मीनारें जो,
गगन को चूमती हैं आज,
उनमें दबा है उसके,
हाथों का अनमोल राज।

फटे हैं कपड़े उसके,
पर जमीर उसका साफ़ है,
तंग है गलियां उसकी,
पर दिल बड़ा विशाल है।

वो बनाता है महल,
दूसरों के रहने के लिए,
खुद सो जाता है फुटपाथ पर,
चाँद तारों को तकने के लिए।

जब दुनिया सोती है,
चैन की मीठी नींद में,
वो जागता है अपनी,
कल की रोटी की उम्मीद में।

वो किसान भी है,
वो मिस्त्री भी है महान,
हर ईंट गारे ने किया है,
उसके श्रम का बखान।

ऐ दुनिया ! रुककर ज़रा,
उसे सलाम तो कर,
जिसने संवारा है ये जहाँ,
उसे प्रणाम तो कर।

वो मज़दूर ही है जो,
पसीने से सब कुछ बनाता है,
तभी तो हर देश,
दुनिया में मुस्कुराता है।

9- हादसे दर हादसे -अंध श्रद्धा का दौर

घर, गली, मोहल्ले, गाँव से
निकलते हैं एक-एक इंसान
बिना खास उद्देश्य
एक जगह हो जाते हैं एकत्र।

कभी बुलाये जाते हैं,
कभी बिन बुलाये आ जाते हैं,
दिमाग़ को घर पर रखकर,
विवेकहीन, संवेदनशून्य, तमाशबीन से।

एक चतुर की अंगुली पर,
नाचते हैं, ताली बजाते हैं,
जय जयकार करते हैं,
नारे लगाते हैं,शोर मचाते हैं।

कर्म और मुक़द्दर के बिना,
अपने दिव्य पुरुष से,
कुछ पाने की चाह में ,
उसकी वाणी का जादू
सम्मोहन मे फांस लेता है।

अचानक सम्मोहित भीड़ दौड़ पड़ती,
तथाकथित दिव्य शक्ति के पीछे,
रुकती नही अंध श्रद्धा,भक्ति।
कुचलती जाती है, लोग मरते जाते हैं,
चीखें सुनाई नहीं देतीं,
संवेदनहीन भीड़ के शोर में।

आंसू,लाशें,अर्थियाँ ,
श्मशान में राख बनते लोग।
ज़िन्दगियां मुआवज़े में बदल जाती हैं।
जांच, दोषारोपण , न्यायालय में

चलती रहती है बहस दर बहस,
भूल जाते हैं लोग और जिम्मेदार,
नया हादसा होने तक।
चलती रहती हैं अंध श्रद्धाएं
हर दौर में बिना सबक के।

10- अहसान समझ पाता है कौन?

अपना तो कहते हैं दुनिया वाले,
वक़्त पर काम आता है कौन?
दे दिए जो घाव गहरे इस जहाँ ने,
मरहम प्यार का लगाता है कौन?

आवाज़ देता हूँ जब किसी को,
सुन दौड़ा-दौड़ा आता है कौन?
सबके दुःख दर्द हैं अपने-अपने,
वास्ता अब किसी से रखता है कौन?

चल तो पड़ते हैं कुछ साथ कदम,
दूर तक साथ निभाता कौन?
मंज़िलों की राह मे बिखरे हैं कांटे
बढ़ाकर हाथ काँटे हटाता कौन?

किसी को किसी की राह लगती है आसां,
मुश्किलें थीं राह में समझ पाता है कौन?
किसी के वास्ते सब कुछ करो उम्र भर,
उस अहसान को समझ पाता है कौन?

चलो उठो मेरे ह्रदय अब यहाँ से,
तुम्हें जाने से भी अब रोकेगा कौन?
यहाँ सब अपने आपमें गुम हैं 'जय '
कामयाबी पर तालियां यहां बजायेगा कौन?

11- जग में फिर है झूठा कौन?

दूजे पर दे दाग़ दिखाई,
अपना दामन देखे कौन?

दूजे का सच लगता झूठा,
अपने झूठ को परखे कौन?

दूजे में तो एब निकालें,
अपने अवगुण देखे कौन?

दूजे को आईना दिखाएँ,
अपना चेहरा देखे कौन?

दूजे को कहते झुक जाओ,
अपनी अकड़ को देखे कौन?

अपनी जगह पे सब सच्चे तो,
जग में फिर झूठा है कौन?

12- तुम ज़िन्दगी से भाग जाना नहीं...

जब भी रखो कदम संभल के रखो,
ठोंकरें लग भी जाएँ तो घबराना नहीं,
मिलेगी मंज़िल ज़रूर एक न एक दिन,
तुम मंज़िल से पहले रुक जाना नहीं

नाकामियों में छुपे होंगे कई सबक,
तुम सच्चाई से नज़रें चुराना नहीं।
कदम दर कदम देने होंगे इम्तिहान,
इम्तिहानों से कभी घबराना नहीं

मिलेंगे ज़माने में हौसला गिराने वाले,
कभी उनकी बातों में आना नहीं।
माँ की दुआएँ रखना तुम सदा साथ,
पिता के पसीने को भूल जाना नहीं

अपने हालात जल्द किसी को बताना नहीं,
आँखें कर बंद जल्द विश्वास जताना नहीं।
मीठा बोलकर ठग लेते है दुनिया वाले,
हर किसी को अपने राज बनाना नहीं

जो तेरे अपने होंगे रहेंगे साथ सदा,
तुम नज़रों से उनकी गिर जाना नहीं।
आएँगे उतार -चढ़ाव हर पल जीवन में,
मायूस हो ज़िन्दगी से भाग तुम जाना नहीं

13- आज फिर...

आज फिर....
चलकर रुका, फिर चल दिया।
आज फिर...
ठोकर लगी,पर सम्भल गया।

आज फिर...
लिखकर मिटाया,फिर लिखा
आज फिर....
पढ़कर भुलाया, और फिर पढ़ा।

आज फिर....
बिखरी कुसुम सी, गंध महकी
आज फिर...
शूलों में उलझा,पर सुलझ गया।

आज फिर...
सोया उनींदा और जग लिया,
आज फिर....
भटका सुबह,साँझ घर आ लिया।

आज फिर....
कुछ भूला, फिर याद किया,
आज फिर....
उदास मन हुआ,फिर मुस्कुरा लिया।

आज फिर....
उसे खोने चला था फिर पा लिया,
आज फिर.....
साथ छूटा ही था, दिल मिला लिया।

आज फिर..
गिला किया उसने, फिर मना लिया,
आज फिर...
आँसू निकलते लेकिन हँस लिया।

आज फिर...
खोने लगा था खुद को पा लिया,
आज फिर...
हारने गया था,पर हार को हरा दिया।

14- चलो, इस जहाँ को सुन्दर बनायें

चलो! इस जहाँ को सुन्दर बनायें....
सो गयीं उम्मीद जो-जो,
आज फिर उनको जगाएँ।
गिर चुके हैं हौसले जो,
आज फिर उनको उठायें।

चलो, इस जहाँ को सुन्दर बनायें.....
गहरे हुए हर ज़ख्म पर,
प्यार का मरहम लगाएँ।
उठ गई जो नफरतों की,
दीवार को मिलकर गिराएँ।

चलो! इस जहाँ को सुन्दर बनायें.....
बिखर रहे जो नादानी में घर,
उनको हम फिर से बसाएँ।
रूठे हुए सारे रिश्तों को,
अहम् छोड़ नजदीक लाएँ।

चलो! इस जहाँ को सुन्दर बनायें....
मदद की दरकार हो गर,
हाथ संवेदना का बढ़ाएं।
इस जहाँ में आए हैं तो,
दूसरों के कुछ काम आएँ।

चलो! इस जहाँ को सुन्दर बनायें.....
हो गए वीरान जो-जो,
बाग वो फिर से बसाएँ।
उजड़ती इस माँ धरा को,
विटप से फिर-फिर सजाएँ।

15- उठो मेरे प्रिय हृदय

उठो मेरे प्रिय हृदय,
बहुत उज्ज्वल होकर चमको,
इंतजार कर रहे हैं सपने,
उनको उड़ान भरने दो,
साहसी बनकर स्वीकार करो चुनौतियां
भय को हृदय में टिकने मत दो ।1।

उठो मेरे प्रिय हृदय,
"तुम ये कर ही नहीं सकते"
इस संदेह को पास फटकने न दो,
भीतर छिपी ताकत को निकालो बाहर,
उसे खारिज होने ना दो,
वही साथ देगा तुम्हारा,
तुम मन चाहा सब कर सकते हो ।2।

उठो मेरे प्रिय हृदय,
रखो अपने पर विश्वास,
हासिल होगा एक दिन सब कुछ,
क्षमताओं को आवाज दो,
गहरी साँसे लेकर,
आगे बढ़ो ओर निरंतर बढ़ते रहो,
जब तक है दम हारना नहीं है ।3।

उठो मेरे प्रिय हृदय,
जिंदगी के लंबे सफर में कई मोड़ आएंगे,
हर मोड़ तुम्हें आजमाएंगे,
समय के साथ रहना तुम कदम,
कदम दर कदम सफलता की,
एक नई कहानी होगा ।4।

उठो मेरे प्रिय हृदय,
कितनी भी मुश्किलों में तुम,
रुकना नहीं, झुकना नहीं,
पंख फैलाना और उड़ना आसमान में
एक दिन सपने जरूर लेंगे आकार,
और जीवन होगा आनंद से भरपूर ।
मेरे प्रिय हृदय,
इस सफ़र में बस तुम धड़कते रहना।5।

16- एक ही तो जीवन है

कल की उलझन में
आज तुम रोना नहीं।
एक ही तो जीवन है,
यूँ व्यर्थ इसे खोना नहीं।

वक्त की लहरें दोबारा,
लौट कभी आती नहीं।
जाग मुसाफिर सुबह हुई,
अब देर तक सोना नहीं।

बाँट ले खुशियाँ जहाँ में,
प्यार की खुशबू बिखेर।
नफरतों के बीज दिल में,
तू कभी भी बोना नहीं।

मुस्कुराकर सामना कर,
हर मुसीबत का यहाँ।
हार के डर से कभी,
खुद को तू खोना नहीं।

17- ख़ामोशी, गुफ़्तगू करती है

कभी लफ़्ज़ों से बढ़कर,
गुफ़्तगू करती है ख़ामोशी,
दबे पाँव दिलों में आरज़ू,
कभी भरती है ख़ामोशी।

जहाँ जज़्बात के सैलाब,
कभी हदों को तोड़ देते हैं,
वहाँ साहिल पे तन्हाई में,
बिखर जाती है ख़ामोशी।

शिकायत हो, मोहब्बत हो,
या फिर कोई दुःख हो,
चेहरे का अपना रंग,
सदा है बदलती ख़ामोशी।

उसे लगता है वो चुप है,
मगर ये राज़ कौन जाने?
तन्हा अपने आप से,
लड़ती रहती है ख़ामोशी।

शोर दुनिया का तुम्हें सच से
'जय' दूर रक्खेगा,
उतर कर रूह में देखो,
जहाँ ठहरती है ख़ामोशी।

18- ज़िन्दगी - कभी धुप कभी छाँव

ज़िन्दगी की राहों में, कभी धूप है कभी छाँव,
अनजानी-सी मंज़िल है, और थके हुए हैं पाँव।

मगर रुकना फितरत नहीं, चलते जाना ही है काम,
हर सुबह के दामन में, छिपी होती है एक शाम।

जब दुखों की धूप तपती है, और, मन घबराता है,
अपने भी पराये लगते, जब वक्त हमें आज़माता है।

कठिनाइयाँ जब घेर लें, और साया भी साथ छोड़ दे,
तब समझो कि किस्मत तुम्हारी, नया रुख मोड़ दे।

वो धूप ही तो सिखाती है, शीतल जल की कीमत,
बिना तपे कहाँ बनती है, किसी की चमकती किस्मत ।

जब अचानक कहीं से, उम्मीद की छाँव आती है,
सूखी हुई उस ज़मीन पर, हरियाली छा जाती है।

अपनों का वो साथ, और छोटी-सी मुस्कुराहट,
मिटा देती है पल भर में, दिल की घबराहट।

हार की कड़वाहट के बिना, जीत का स्वाद नहीं,
दुख के उन लम्हों के बिना, सुख की याद नहीं।

अँधेरा ढलेगा एक दिन, फिर चाँदनी रात पायेंगे,
बदलते हुए हालात ही, जीने का ढंग सिखायेंगे।

19- फिर वही बात

वही पुराने गिले-शिकवे,
वही पुरानी घात,
मुड़कर देखा तो खड़ी है,
फिर वही बात।

दौड़ती दुनिया, बदलते मौसम,
नए-नए चेहरे,
पर दिल के किसी कोने में,
जख्म हैं गहरे।

सुलझने की आस में, उलझे हालात,
खामोशी को चीरती है,
फिर वही बात।

तर्क वही हैं, दलीलें वही हैं,
वही है अंदाज़,
जैसे पुराने गिटार पर छेड़ा हो,
कोई नया साज़।

ठहर गई है जुबां और थमे हैं जज़्बात,
तकरार की दहलीज पर,
फिर वही बात।

अब मंज़िलें नयी हैं,
रास्ते भी जुदा,
मुड़-मुड़ कर क्यों देखे,
किस से हुई खता?

कल के अंधेरों से निकल,
थाम लें उजालों का साथ
वरना, उम्र भर चलती रहेगी
फिर वही बात।

20- मिले जो पल ये सुहाने, संभाल कर रखना

मिले जो पल ये सुहाने, संभाल कर रखना,
ग़मों को दिल से ज़रा तुम निकाल कर रखना ।

न जाने नफरत की ज़द में कहाँ हो कल दुनिया,
तुम आज थोड़ा प्यार संभाल कर रखना ।

बेसुरा हो जाए न ये सफर साँसों का,
जिंदगी को तुम सदा सुर-ताल पर रखना ।

बिछड़ना तय है यहाँ हर किसी का अपनों से,
दिलों में प्यार की शमा जलाये तुम रखना ।

जो बीत गया है कल, उसकी फ़िक्र क्या करना,
मिले जो आज पल, 'जय' उसे बेमिसाल कर रखना ।

21- आदमी की पहचान

जो धन की तिजोरी में , खुशियाँ तलाशता है,
वो वक़्त की ढलती साँझ में, अक्सर हारता है।

जिसके हृदय में स्नेह की, बहती कोई धारा हो,
जो टूटते हुए सपनों का, बनता एक सहारा हो।

संवेदना जिसके लहू में, बन के रवानगी सी दौड़े,
वो हर बुझती हुई लौ का, चमकता सितारा हो।

सहयोग के हाथों से जिसने, काँटे हटाए हैं,
रेगिस्तानी रास्तों पर ,जिसने बाग़ लगाए हैं।

सिक्कों की खनक से ऊँचा, नाम है कर्मों का,
उसने दुआओं के खज़ाने, जी भर के कमाए हैं।

देह ढलती है, साँस रुकती है, ये रीत पुरानी है,
मगर नेक इंसान की हस्ती, अमर एक कहानी है।

जब तक दया और प्रेम की, इस जग में निशानी है,
उसकी यादों की कहानी, सबके मुँह जुबानी है।

22- मुसाफ़िर हूँ यारो

सफ़र दर सफ़र बस मैं चलता रहा हूँ,
मैं आशा के दीए सा जलता रहा हूँ।

न मंज़िल की हसरत, न रुकने की चाहत,
मैं चलने की रंगत बदलता रहा हूँ।

हवाओं ने पूछा है ठिकाना मेरा,
मैं रेत के चिन्हों पे पलता रहा हूँ।

कभी धूप ओढ़ी, कभी छाँव पहनी,
मैं दर्दों की आंखों में खलता रहा हूँ।

मुसाफ़िर हूँ यारो, यही मेरा परिचय,
मैं मिट्टी के मानिंद गलता रहा हूँ।

स्वयं राह मुझको बढ़ाती गयी आगे,
सफर के मुताबिक मैं बदलता रहा हूँ।

23- फिर किसी दिन

अधूरे रह गए जो ख़्वाब,
देखेंगे फिर किसी दिन,
पुरानी यादों के वो पन्ने,
पलटेंगे फिर किसी दिन।

अभी तो गर्द-ए-मंज़िल है,
सफर है और थकान है,
ठहर कर साये में सुकूँ अपना,
ढूँढेंगे फिर किसी दिन।

बहुत मसरूफ़ हैं शायद,
सभी अपनी ही उलझन में,
बैठकर फुर्सत में उनसे करेंगे,
गुफ़्तगू फिर किसी दिन।

दबा रक्खे हैं जो दिल में,
कई तूफ़ाँ कई शिकवे,
वो सारे राज़ फुर्सत में,
कहेंगे फिर किसी दिन।

24- शिलालेख

शिलालेखों पर बहुत से नाम थे,
कुछ राजदंड की ताक़त से खुदे थे,
कुछ चापलूस हथेलियों ने तराशे थे,
कुछ सचमुच सम्मान के अधिकारी थे।

समय ने किसी से बैर नहीं रखा,
सबको एक-सी धूप दी,
एक-सी बरसात,
और एक-सी धूल दी ।

फिर देखा—
जो नाम बहुत ऊँचे अक्षरों में लिखे गए थे,
वे सबसे पहले धुँधले पड़े।
जो अपने कद से बड़े हो गए थे,
वे इतिहास की भीड़ में
सबसे छोटे दिखाई दिए।

कई शिलालेख
ज़मीन के नीचे दब गए,
कई खड़े तो रहे,
मगर उन पर लिखा वैभव
समय के साथ मिटता गया ।

आज वहाँ पत्थर हैं,
पर पहचान नहीं।
दीवारें हैं, पर आवाज़ नहीं ।
तब समझ में आया—
अमर होने की जिद
पत्थरों पर नहीं लिखी जाती ।

जिस आदमी ने
किसी बच्चे को सपने दिए,
किसी गरीब को न्याय दिलाया,
उसका कोई शिलालेख नहीं मिला,
लेकिन वह आज भी
लोगों की यादों में ज़िंदा है।

और जिनके नाम
हर मोड़ पर उकेरे गए थे,
उनके लिए
अब कोई राहगीर भी नहीं रुकता।
पत्थर गवाही नहीं देते,
वे केवल समय की मार सहते हैं।

इतना भर करना
कि तुम्हारे जाने के बाद
यदि कोई शिलालेख मिट भी जाए,
तो किसी बूढ़े की दुआ,
किसी बच्चे की मुस्कान,
और किसी गरीब की आँख का विश्वास
तुम्हारा पता बताते रहें ।

क्योंकि इतिहास
पत्थरों से कम,
इंसानों की स्मृतियों से
ज़्यादा लिखा जाता है ।

25- अभी हाथ खुलने दो

अभी तो खामोश लब हैं, अभी बस आस पलने दो,
अभी तो बंधे हैं हाथ मेरे, रुको मेरे हाथ खुलने दो।

ये दीवारें, ये दरिया, ये हदें सब टूट जाएँगी,
जरा सा हौसले की आग में लोहे को गलने दो।

जो कहते हैं कि उड़ने की जुर्रत हम नहीं रखते,
उन्हें कहना कि पहले पर परिंदों के निकलने दो।

बना दूँगा नई दुनिया मैं अपनी मुट्ठियों से ही,
मेहनत के पसीने को ज़रा कामयाबी में ढलने दो।

जिन्हें तूफ़ान समझा है, वो बस एक आह है मेरी,
अभी पाँव जमे हैं, ज़रा रफ़्तार से चलने दो।

नया सूरज उगेगा इन सियाह रातों के सीने से,
अभी ये रात गहरी है, अभी ये शब पिघलने दो।

26- मैंने उसे जाने दिया

वो मिली तो थी मगर, मैंने उसे जाने दिया।
था मेरा ही हमसफ़र, पर मैंने उसे जाने दिया।

एक मुद्दत से सजाया था जो ख़्वाब आँखों में,
कर के खुद ही दर-ब-दर, मैंने उसे जाने दिया।

साथ रहकर भी बहुत दूरियाँ थीं दरमियाँ,
सोचकर ये - सोचकर, मैंने उसे जाने दिया।

बाँध लेता गर उसे मैं अपनी यादों के तले,
रहता सदा खोया हुआ ,मैंने उसे जाने दिया।

उसकी खुशियों में ही जीत थी शामिल मेरी ,
बन के उसका रहगुज़र, मैंने उसे जाने दिया।

27- भीड़

भीड़ में चलते हुए अक्सर,
मैंने चेहरों को देखा है,
हँसी के रंगों से सजे हुए,
भीतर से फिर भी रेत-से सूखे देखा है।

सड़कों पर उमड़ते कदमों का
एक अथाह समंदर होता है,
पर हर लहर अपने भीतर
एक अलग-सा बंजर होता है।

कोई सपनों का बोझ उठाए,
कोई अपनों की याद लिए,
कोई मंज़िल की धुन में खोया,
कोई जीवन का विषाद लिए।

भीड़ बहुत कुछ कहती है,
पर सुनती कम ही दिखाई देती,
हर आवाज़ यहाँ गुम हो जाती,
बस गूँज अकेली रह जाती।

कंधों से कंधे टकराते हैं,
दिल फिर भी दूर खड़े रहते,
हज़ारों लोगों के बीच खड़े
हम अपने ही भीतर पड़े रहते।

भीड़ समय की चलती धारा है,
जिसमें सब बहते जाते हैं,
कुछ नाम किनारों पर लिख जाते,
कुछ चुपचाप मिट जाते हैं।

इसलिए मैंने सीखा है—
भीड़ का हिस्सा होकर भी,
अपने भीतर एक दिया जलाए रखना,
खुद को खुद से मिलाए रखना।

28- ये ज़रूरी तो नहीं

हर किसी से दिल लगे, ये ज़रूरी तो नहीं,
हर दुआ में वो मिले, ये ज़रूरी तो नहीं।

धूप के हिस्से में हर बार जलन ही आए,
छाँव भी उसको मिले, ये ज़रूरी तो नहीं।

जिसको चाहा है सदा टूट के अपनी जानिब,
वो भी उतना ही झुके, ये ज़रूरी तो नहीं।

सच की राहों में हमेशा ही उजाले होंगे,
हर क़दम फूल खिले, ये ज़रूरी तो नहीं।

वक़्त हर ज़ख़्म को भर देगा, सुना है मगर,
दर्द दिल से भी ढले, ये ज़रूरी तो नहीं।

लोग चेहरों से ही पहचान लिया करते हैं,
रूह तक कोई चले, ये ज़रूरी तो नहीं।

ज़िंदगी अपनी शर्तों पे कहाँ चलती है यहाँ,
जो भी सोचा था मिले, ये ज़रूरी तो नहीं।

29- कोई घर रोक नहीं पाया मुझे

कोई घर रोक नहीं पाया मुझे
मैं हर बार
शहर दर शहर
अपनी ही देहरी से निर्वासित हुआ।

पहले माँ का आँचल छूटा,
फिर वह शहर
जहाँ किताबों के पन्नों में
भविष्य के सपने रखे थे।

फिर नौकरी ने कहा—
"चलो…"
और मैं चलता रहा।

हर तबादले ने
मेरे नाम के आगे एक नया शहर जोड़ दिया,
लेकिन भीतर का आदमी
हर बार कुछ और अकेला होता गया।

मैंने रिश्तों को
पेड़ों की तरह लगाया,
मगर आदेशों की आँधी आई
और जड़ों सहित
उखाड़कर दूसरी ज़मीन पर रोप दिया।

कुछ दोस्त
पुरानी डायरी के पन्ने बन गए,
कुछ चेहरे
रेल की खिड़की से
पीछे छूटते दृश्यों की तरह
धुँधले पड़ गए।

कभी ज़िंदगी को
मैंने अपनी शर्तों पर लिखा,
कभी ज़िंदगी ने
लाल स्याही से
मेरे सारे निर्णय काट दिए।

फिर भी
मैंने शिकायतों की खेती नहीं की।
जो अच्छा मिला,
उसे अपनी रोटी का स्वाद बना लिया।
जो बुरा मिला,
उसे समय की धूप में सुखाकर
हवा के हवाले कर दिया।

मैंने देखा है—
बंधन केवल रस्सियों से नहीं होते,
कर्तव्यों की मुस्कान भी
कभी-कभी कैदखाना बन जाती है।

लेकिन,
जिस दिन भीतर का आकाश खुला,
मैंने जाना—
उड़ने के लिए
पंखों से ज़्यादा
हौसले की ज़रूरत होती है।

अब कोई पूछता है—
"ज़िंदगी कैसी रही?"

मैं हँसकर कहता हूँ—
सफ़र लंबा था, रास्ते कठिन थे,
मगर मैं हर मोड़ पर
अपने होने की गवाही देता रहा।

मैंने उम्र नहीं काटी,
मैंने उसे जिया है।

और जब अंतिम यात्रा होगी,
तो मेरे पाँवों की धूल
इतना तो ज़रूर कहेगी—

यह आदमी
घरों में नहीं समाया,
रास्तों में बसता रहा।
जिसने जीवन को बोझ नहीं,
एक सतत यात्रा माना—
और अंत तक
ज़िंदगी को काटा नहीं,
जीता रहा।

30- कुछ नहीं का मतलब, बहुत कुछ होता है

"कुछ नहीं" का मतलब बहुत कुछ होता है,
हर ख़ामोशी के भीतर एक शोर होता है।
जब माँ कहती है— "कुछ नहीं बेटा,"
आँखों में तब भी इक समंदर होता है।

होंठ मुस्काते रहते हैं मगर,
दिल कहीं चुपचाप रोता है।
जब कोई पूछे— "कैसे हो?"
और उत्तर मिले— "कुछ नहीं,"
समझ लेना,
शब्दों से बड़ा कोई बोझ ढोता है।

सूना आँगन, बुझता दीपक,
खाली कुर्सी, बंद दरवाज़ा—
ये सब मिलकर कहते हैं,
अनुपस्थिति भी बहुत कुछ कहती है।

पेड़ से टूटकर गिरा पत्ता,
कुछ नहीं कहता,
फिर भी ऋतुओं का बदलना
उसमें साफ़ दिखाई देता है।

जीवन की सबसे बड़ी सीख
अक्सर किताबों में नहीं मिलती;
जो छूट गया, जो खो गया,
वही सबसे बड़ा शिक्षक होता है।

"कुछ नहीं" केवल दो शब्द नहीं,
यह धैर्य का दूसरा नाम है,
यह टूटे हुए मन की चुप्पी है,
यह अधूरी प्रार्थना का मुकाम है।

जब अहंकार कहता है
"मैं ही सब कुछ हूँ,"
तभी समय मुस्कुराकर बताता है—
अंत में मनुष्य भी
" कुछ नहीं " होता है।

और शायद इसी कुछ नहीं में
सारा आकाश समाया है,
बीज की तरह,
जो दिखता तो कुछ नहीं,
पर उसके भीतर
पूरा जंगल सोया होता है।

इसलिए याद रखना—
हर खालीपन व्यर्थ नहीं होता,
हर मौन हार नहीं होता,
हर अंत,... अंत नहीं होता।

क्योंकि सच यही है—
"कुछ नहीं" का मतलब,
बहुत कुछ होता है।

31- मन को उड़ना है अगर, होंसलो के पंखों से उड़ो

प्रेम चेहरों का नहीं, दिल की सदा होता है,
रूह से रूह मिले, तब ये नशा होता है।

जिस्म की धूप तो इक रोज़ ढल ही जाती है,
प्रेम बरसों भी रहे, ऐसा दीया होता है।

जिसने खोकर सदा उसकी ख़ुशी ही चाही,
उसके हिस्से में सदा प्रेम अमर होता है।

प्रेम कभी सुख है, कभी विरह की पीड़ा है,
धूप के साथ-साथ कहीं ठंडी हवा होता है।

मन को उड़ना हो अगर, प्रेम के पंखों से उड़ो,
हर खुला आसमाँ फिर अपना-सा होता है।

आज रिश्तों में बहुत शोर है, लेकिन फिर भी,
एक ख़ामोश भरोसा ही वफ़ा होता है।

नाज़ुक एहसास को अल्फ़ाज़ कहाँ बाँध सके,
मौन आँखों का भी अपना फ़लसफ़ा होता है।

प्रेम मंदिर भी है, मस्जिद भी, गुरुद्वारा भी,
जहाँ इंसान झुके, उस जगह ईश्वर होता है।

जिसको पाने की नहीं, बस उसे जीने की लगन,
उसके हर दर्द में भी इक नशा होता है।

रात जितनी भी घनी हो, यह यक़ीं रख ऐ दिल,
प्रेम का दीप अँधेरों में जला होता है।

ज़ख़्म जितने भी मिले, दिल को शिकायत न हुई,
प्रेम का अपना ही जीने का नशा होता है।

'जय' जिसने प्रेम किया, हार के भी जीत गया,
इश्क़ का अपना ही इक अलग फ़लसफ़ा होता है।

32- टूटे हुए सपनों से नये सपने जन्म लेते हैं

काँटों की गोद में ही, गुलाब मुस्कुराता है,
हर चुभन के बाद ही, जीवन महक पाता है।

बीज मिट्टी में दफ़्न होकर ही वृक्ष बनता है,
झुकने वाला ही अक्सर सबसे ऊँचा उठता है।

नदी चट्टानों से टकराकर भी गाती रहती है,
बाधाएँ ही उसकी रफ़्तार बढ़ाती रहती हैं।

बादल सूरज को ढक लें तो क्या होता है,
सूरज फिर भी अपनी रोशनी नहीं खोता है।

राख में भी अग्नि की संभावना रहती है,
हर पराजय में विजय की कहानी बहती है।

टूटे हुए सपनों से ही नए सपने जन्म लेते हैं,
बिखरे हुए रास्ते ही मंज़िल तक पहुँचते हैं।

33- प्रेम : एक मधुर एहसास

तेरा एहसास मेरी रूह में उतरा जैसे,
कोई दरिया किसी सागर में ठहरा जैसे ।

तेरी आवाज़ से महकी हैं मेरी तन्हाइयाँ,
रात वीरान थी, फूलों का बसेरा जैसे ।

तेरे मिलने की ख़ुशी दिल में उतर आती है,
सूखी धरती पे बरसता हो सावन जैसे ।

तेरी आँखों में जो देखा तो यक़ीं ये आया,
ख़ुद मोहब्बत ने लिया हो कोई चेहरा जैसे ।

उम्र भर साथ निभाने की तमन्ना है मुझे,
साँस का जिस्म से होता है रिश्ता जैसे ।

तेरी ख़ामोशियाँ भी मुझसे बातें करती हैं,
कोई नग़्मा हो बिना लफ़्ज़ के गाया जैसे ।

प्रेम पूजा भी है, विश्वास भी, समर्पण भी,
एक दीपक हो अँधेरों में जो जलता जैसे ।

34- एक दिन

अधूरी रह गई है जो दास्ताँ, एक दिन,
करेगी ख़ुद वही अपना बयाँ, एक दिन।

धूप ने जितना जलाया है सफ़र की राह में,
छाँव का भी मिल ही जाएगा निशाँ, एक दिन।

आँधियों से लड़ रहा है जो अकेला उम्र भर,
उसके हक़ में भी चलेगी ये हवा, एक दिन।

रात कितनी भी घनी हो, और लंबी क्यों न हो,
लौट ही आयेगा सुबह का सूरज , एक दिन।

दर्द की तह में छिपे रहते हैं आंसू भी कई,
दिल समझ पाएगा क्या उनका मोल , एक दिन।

वक़्त के आगे झुके हैं ताज कितने ही यहाँ,
मिट ही जाता है हर इक झूठा गुमाँ, एक दिन।

जिस मोहब्बत को छुपाकर रख लिया है उम्र भर,
उसी के नाम का नग़मा गूँज जायेगा , एक दिन।

35- फिर भी

दिल ने हर मोड़ पर उम्मीद सँभाली, फिर भी,
दुनिया ने हर खुशी छीन ही डाली, फिर भी।

दर्द ने उम्र भर हमसे वफ़ा की ऐसे,
हमने मुस्कानों की लौ नहीं बुझने दी, फिर भी।

दुनिया के बाज़ार में रिश्ते भी बिकते देखे,
दिल ने इंसानियत की शमा जला ली, फिर भी।

जिसको अपना समझा वही ख़ामोश रहा,
हमने हर चोट मोहब्बत से उठा ली, फिर भी।

दर्द जब हद से गुज़रा तो ग़ज़ल बन बैठा,
दिल ने हर अश्क में तस्वीर बना ली, फिर भी।

दुनिया कहती रही हार गए हो तुम तो,
दिल ने उम्मीद की राह नहीं छोड़ी, फिर भी।

ज़िंदगी दर्द की बारिश में भी महकी अक्सर,
दिल ने हर ज़ख्म को खुशबू बना ली, फिर भी।

'जय' दिल का सफ़र दर्द से होकर गुज़रा,
दुनिया ने लाख ठुकराया, मुस्कुरा ली, फिर भी।

36- ज़िन्दगी की राहें

जीवन की राहें
न आसान हैं, न मुश्किल,
ये तो बस चलने वाले के
कदमों का हौसला पूछती हैं।

कहीं धूप बनकर तपती हैं,
कहीं छाँव बनकर ठहर जाती हैं,
कभी काँटों से भर जाती हैं,
कभी फूलों-सी महक जाती हैं।

जो हार के बैठ गया,
उसे हर मोड़ अँधेरा लगता है,
जो उम्मीद का दीप जलाए रखे,
उसे रात में भी सवेरा लगता है।

नदियों की तरह बहना पड़ता है,
पर्वतों-सा अडिग रहना पड़ता है,
मंज़िलें यूँ ही नहीं मिलतीं,
खुद को हर दिन गढ़ना पड़ता है।

सुख आए तो विनम्र रहो,
दुःख आए तो धैर्य रखो,
समय का पहिया चलता रहता है,
इस पर अपना विश्वास रखो।

जीवन की राहें
न आसान हैं, न मुश्किल,
ये तो अनुभव की पुस्तक हैं,
जिसका हर पन्ना कुछ सिखलाता है।

जो मुस्कुराकर चलता जाए,
वही असली राही कहलाता है।

37- कोई यहां स्थाई नहीं

कोई यहाँ स्थायी नहीं
बनते-बिगड़ते, विकसित और
ध्वस्त होते साम्राज्य देखे-सुने,
समय की धूल में मिलते हुए
कितने ताज औ सिंहासन गिने।

जो कल तक धरती के स्वामी थे,
आज इतिहास के पन्नों में कहीं खोए पड़े हैं,
उनके वैभव के गीत अब केवल
खंडहरों की खामोशी में खड़े हैं।

नदियाँ बहती रहीं अपने पथ पर,
पर्वत भी चुपचाप खड़े रहे,
राजाओं के जयघोष थमे,
पर ऋतुओं के क्रम न रुके।

कभी किसी ने सोचा था क्या,
कि सोने के महल भी मिट्टी होंगे?
कि जिनके आदेश से दिशाएँ काँपती थीं,
वे स्वयं समय के आगे बौने होंगे?

जीवन का यही शाश्वत सत्य है—
न यौवन ठहरता, न धन रुकता,
न सत्ता का मद अमर होता,
न दुःख का बादल सदा झुकता।

फिर क्यों इतना अभिमान करें,
क्यों अपने होने पर इतराएँ?
जब अंततः सबको एक दिन
समय के सागर में समा जाना है।

इसलिए प्रेम के दीप जलाओ,
कुछ अच्छे कर्मों की फसल उगाओ,
क्योंकि नाम नहीं, पद नहीं, साम्राज्य नहीं—
मानवता ही पीछे रह जाती है।

बनते-बिगड़ते, विकसित और ध्वस्त होते साम्राज्य देखे-सुने,
युगों ने यही संदेश दिया है—
कोई यहाँ स्थायी नहीं,
कोई यहाँ स्थायी नहीं।

38- कभी तन्हाइयों में

कभी तन्हाइयों में ख़ुद से बातें कर लिया करता हूँ,
जो दिल में दर्द ठहरा है, उसे भी सुन लिया करता हूँ।

कभी तन्हाइयों में याद की ख़ुशबू उतरती है,
मैं सूखे फूल ख़्वाबों के किताबों में रखा करता हूँ।

कभी तन्हाइयों में चाँद से रिश्ता-सा बन जाता,
मैं अपनी रात की वीरानियाँ उसको कहा करता हूँ।

कभी तन्हाइयों में वक़्त का चेहरा बदलता है,
पुराने ज़ख़्म हँसते हैं, नया मरहम लगा करता हूँ।

कभी तन्हाइयों में एक सन्नाटा पुकारे जब,
मैं अपने टूटते हौसलों को फिर जगा करता हूँ।

कभी तन्हाइयों में ये समझ आता है धीरे से,
जो अपने साथ चल पाए, वही अपना हुआ करता है।

कभी तन्हाइयों में अश्क भी मोती-से लगते हैं,
मैं ग़म की धूप में भी मुस्कुराना सीखता हूँ।

अपनी तन्हाइयों में 'जय ' इतना जान पाया हूँ,
भीड़ से ज़्यादा इंसाँ ख़ुद में तनहा हुआ करता है।

39- नई सुबह की तलाश

रात कितनी भी लंबी हो,
सूरज को आना होगा,
बुझते हुए सपनों को फिर
आँखों में सजाना होगा।

कुछ रास्ते छूट गए पीछे,
कुछ मंज़िलें अनजान रहीं,
कुछ अपने होकर भी अपने न थे,
कुछ दूरियाँ पहचान रहीं।

फिर भी कदम रुके नहीं हैं,
चलना अभी बाकी है,
टूटे हुए विश्वास के भीतर
एक रोशनी बाकी है।

जो बीत गया, उसे जाने दो,
हर घाव को भर जाने दो,
कल की राख से उठकर फिर
नया दीप जलाने दो।

हवाओं ने बहुत रोका है,
आँधियों ने खूब सताया है,
पर जिसने चलना सीख लिया,
उसने रास्ता बनाया है।

अब अँधेरों से क्या डरना,
जब भीतर उजियारा है,
हर गिरने के बाद संभलना ही
जीवन का एक इशारा है।

मैं फिर सपनों की ओर चलूँगा,
फिर उम्मीदों को थामूँगा,
जहाँ अभी रात बाकी है,
वहीं सुबह का नाम लूँगा।

नई सुबह की तलाश में
मैं आज भी मुसाफिर हूँ,
मंज़िल चाहे जितनी दूर हो—
चलने को अब भी तैयार हूँ।

40- हर आदमी यहां आईना लेकर खड़ा है

यहाँ अच्छे रहोगे तो कमज़ोर कहे जाओगे,
ज़रा-सा सिर उठाओगे तो सिरफिरा कहे जाओगे।

मुझे हर एक को अच्छा दिखाई देना नहीं,
मेरा अपने सच से बड़ा कोई फ़ैसला नहीं।

वे मेरे मौन का मतलब गुनाह लिखते रहे,
मैं जानता था—हर सवाल बोलता नहीं।

जो चीख़ते हैं, वही सच के ठेकेदार हैं,
यह कैसा दौर है, मौन का कोई गवाह नहीं।

मैं अपने ज़ख़्म लेकर भी मुस्कुरा तो लूँ,
मगर ये झूठ है कि दर्द की कोई राह नहीं।

यहाँ उसूल बिक रहे हैं रोज़ हाट में,
बचा सका जो ख़ुद को, वही बेपनाह नहीं।

तुम अपने होने की गवाही ख़ुद ही देना,
यहाँ किसी के पास किसी की निगाह नहीं।

चलो, अकेले ही सही, इस धूल भरे सफ़र में,
हर कारवाँ के साथ चलना भी मुनासिब नहीं।

41- अक्सर मैं चुप रहकर जीत जाता हूँ

दुनिया शोर मचाती है,
अपनी ताकत दिखाने को,
हजारों तर्क गढ़ती है,
बस मुझे नीचा दिखाने को,
मैं मुस्कुराकर हर जबाब देता हूं,
इस तरह चुपचाप रहकर जीत जाता हूँ।

जब तीखे शब्द तीर बनकर,
मेरी ओर आते हैं,
जब झूठे इल्जामों के बादल,
मेरे सिर पर छाते हैं,
मैं खामोशी को अपनी ढाल बनाता हूँ
इस तरह चुपचाप रहकर जीत जाता हूँ।

मौन में जो गहराई है,
वो चिल्लाने में कहाँ?
ठहरे हुए पानी सी शान्ति,
इस ज़माने में कहाँ?
मैं वक्त को मौन से उत्तर देता हूँ,
इस तरह चुपचाप रहकर जीत जाता हूँ।

लोग समझते हैं इसे हार मेरी,
या समझते हैं मेरी लाचारी,
पर उन्हें होता क्या है पता,
मौन मेरी सबसे बड़ी तैयारी है,
बिना लड़े ही अपना काम कर जाता हूँ,
इस तरह चुपचाप रहकर जीत जाता हूँ।

42- शहर का दर्द

ये शहर रोज़ नए हादसों को ढोता है,
मगर हर आदमी चुपचाप इसे सहता है।

हँसी के चेहरे बहुत हैं, खुशी कहीं कहीं
कई आँखों मे आंसुओं का समंदर होता है।

हमीं ने छीन लिया पेड़ का हरा आँचल,
परिंदों का भी यहाँ अब कहाँ बसेरा है।

हर एक घर में उजालों की भीड़ है लेकिन,
किसी फुटपाथ पर सोया बहुत अँधेरा है।

यहाँ तो रिश्ते भी सिक्कों में तोले जाते,
यहाँ वफ़ा का कोई नामों निशां ही नहीं हैं।

यहाँ कोई भी किसी का नहीं दिखाई दे,
मगर हर आदमी अपनों को ढूँढ़ता है।

जो सच कहे, वही सबसे ज़्यादा तनहा है,
झूठ बोलो तो यहाँ हर तरफ़ बोलबाला है।

चलो तलाशें अभी भी किसी का धड़कता दिल,
अभी इंसान का मरना कहाँ मुकम्मल है।

"जय " शहर से शिकवा नहीं, दुआ करना,
इसी धुएँ से कभी एक नया सवेरा है।

43- आदमी कहाँ है, ये सवाल निकल पड़ा है

हर तरफ़ इमारतों का सिलसिला निकल पड़ा,
आदमी मगर है कहाँ, ये सवाल निकल पड़ा।

नित बन रही सड़कें और मकान ऊँचे हो रहे,
झोपड़ी के द्वार से फिर भी मलाल निकल पड़ा।

एक को रोटी नहीं, एक को महलों का नशा,
इस शहर के फ़ैसलों का क्या कमाल निकल पड़ा।

कहीं संस्कार बिक गए हैं चंद सिक्कों के लिए,
कहीं रिश्वत का एक नया ही दलाल निकल पड़ा।

चेहरों पर मुस्कान है, भीतर धुआँ-धुआँ सफ़र,
हर खुशी के साथ कोई दर्द पाल निकल पड़ा।

वक्त की अदालतों में सच अकेला रह गया,
झूठ हर गवाही में बनकर वकील निकल पड़ा।

तरक़्क़ी का शोर है, अख़बार भी ख़ामोश हैं,
हर तरफ़ निर्माण है, पर आदमी लापता पड़ा।

हमने सोचा था कि उजियारा मिलेगा हर तरफ़,
घर तो रोशन हो गए, पर दिल में शाम निकल पड़ा।

44- कई रात सोया नहीं, कई रात जागा नहीं

कई रात सोया नहीं, कई रात जागा नहीं,
अपने ही दर्द से मगर कभी मैं भागा नहीं।

उम्र भर ढूँढ़ता रहा मैं सुकून की एक किरन,
धूप मिल गई बहुत, मगर मिला कोई साया नहीं।

जिसे समझा था हमसफ़र, वही मोड़ पर बिछड़ गया,
फिर किसी अजनबी से दिल कभी लगा नहीं।

आँख खुली तो हर तरफ़ ख़्वाब बिखरे हुए मिले,
आँख मूँदी तो एक भी ख़्वाब फिर सजा नहीं।

रात भर सोचता रहा, कौन अपना, कौन पराया,
सुबह होते-होते मगर कोई फ़ैसला हुआ नहीं।

मेरे होंठों पे हँसी थी, दिल में आँधियों का शोर था,
लोग कहते रहे—"उसे तो कोई ग़म रहा नहीं।"

ये अजीब कैद है कि न सफ़र हुआ, न ठहराव,
मैं कई रात सोया नहीं, कई रात जगा नहीं।

"जय " ये ज़िंदगी भी क्या अजब सी दास्ताँ हुई,
जिसे जी तो रहे हैं हम, मगर कभी जिया नहीं।

45- बूंद का सुहाना सफ़र

बूँद थी कभी बादलों की गोद में,
फिर धरती पर बरस गई।
पत्तों पर ठहरी कुछ पल भर,
फिर नालों के संग बह गई।

नाले से निकली तो नदी बनी,
नदी से सागर में खो गई,
अपना नाम, अपना रूप मिटाकर
अनंत की बाहों में सो गई।

पर यह अंत कहाँ था उसका,
सूरज ने फिर पुकार लिया,
वाष्प बनाकर आकाशों ने
उसे पुनः सँवार लिया।

फिर बादल बनी, फिर बूँद बनी,
फिर जीवन का आधार बनी,
सूखी धरती की प्यास बुझाकर
हरियाली का श्रृंगार बनी।

प्रकृति का यह अद्भुत संदेश—
मिटना भी एक नया जन्म है,
खो जाना ही अंत नहीं है,
परिवर्तन ही जीवन का क्रम है।

बूँद सिखाती है चुपके से,
अहंकारों को त्याग देना,
नाले, नदी, सागर में मिटकर
फिर जीवन बनकर जाग लेना।

46- उपेक्षित आदमी

घर का चूल्हा रोज़ ही जलता रहा है,
आदमी हर दर्द को सहता रहा है।

धूप में तपकर भी चेहरे पर हँसी रख,
अपने बच्चों के लिए हँसता रहा है।

ख़्वाब आँखों में सजाकर उम्र भर वो,
वक़्त की ठोकर मगर खाता रहा है।

सुख मिला तो दो घड़ी मेहमान बनकर,
दुःख मगर बरसों यहाँ रहता रहा है।

जेब खाली थी मगर दिल था बहुत धनवान,
प्यार अपनों पर सदा लुटाता रहा है।

भीड़ में खोकर भी अपनी पहचान को,
आम इंसाँ ढूँढ़ता रहता रहा है।

रात भर चिंताओं की चादर ओढ़कर भी,
भोर का स्वागत वही करता रहा है।

ये उसी के श्रम का हासिल है जहाँ ये,
और वही उपेक्षित-सा रहता रहा है।

47- कुछ तो लोग कहेंगे

फ़िक्र दुनिया की न कर,
जो कहते है तो कहने दे,
बहता है जो दरिया,
उसे अपनी मौज में बहने दे।

रास्ते जब तय हैं तो,
मंज़िल की जानिब बढ़ता जा,
ये काँटों भरी जो राह है,
होंसले इन्ही पे टिकने दे।

लोग तो उँगलियाँ उठाएँगे ही
हर एक मोड़ पर,
तू रख बुलंद उम्मीद,
जो होना है वो होने दे।

ख्वाब जो देखे हैं आँखों ने,
उन्हें करना है पूरा
ज़माने की बंदिशों को,
बस एक किनारे रहने दे।

अपनी धुन में मगन,
मत सुन महफ़िल का शोर,
जो जलते हैं तेरी उड़ान से,
उन्हें तू जलने ही दे।

48- तो कोई बात बने

उदासी दिल की मिटाओ तो कोई बात बने,
किसी के दर्द में काम आओ तो कोई बात बने।

ये क्या कि सिर्फ अपने घर में जलाते हो चराग़,
किसी और के घर को रोशन करो तो कोई बात बने।

ख़ुशी में साथ निभाने को लोग हज़ारों हैं,
किसी के ग़म मे सहारा बनो तो कोई बात बने।

ज़बाँ से हमदर्दी के लफ्ज़ तो हर कोई कहे,
आँसू आँखों के चुराओ तो कोई बात बने।

सिर्फ कोरी बातों से महफ़िल न लूटो,
गिरते हुए को उठाओ तो कोई बात बने।

मिले जो वक़्त तो बैठो किसी बुज़ुर्ग के पास,
कहानियाँ उनकी सुनो तो कोई बात बने।

सफ़र में धूप बहुत है, झुलस रहे हैं पाँव,
पौधा उम्मीद का लगाओ तो कोई बात बने।

ठोकरें खाना तो रोज़ की बात है 'जय'
ठोकर खाकर ठाकुर बनो तो कोई बात बने।

49- गर प्रकृति धर्मों में बंट गई होती

अगर नदी, पेड़, पहाड़, फूल,
आकाश, बादल, पानी
धर्मों और जातियों में बँट गए होते,
तो शायद
नदी बहने से पहले पूछती—
"तुम्हारा नाम क्या है?"
और प्यासे होंठों को
उनकी पहचान देखकर ही
जल देती।

पेड़ अपनी छाया का
हिसाब रखते,
किसी को धूप, किसी को साया,
किसी को फल, किसी को काँटे,
जाति और मज़हब के तराजू पर तौलते।

पहाड़ अपनी ऊँचाइयों पर
कुछ लोगों का अधिकार लिख देते,
और बाकी लोगों के लिए
रास्तों पर बंदिशों की दीवार खड़ी कर देते।

फूल भी शायद
सुगंध बाँटने से पहले
वंशावली पूछते,
और तितलियों के पंखों पर
धर्म के रंग चिपका देते।

आकाश टुकड़ों में बँट जाता,
हर किसी का सूरज अलग होता,
किसी का चाँद अलग,
और सितारे भी
सीमाओं के पहरेदार बन जाते।

बादल बरसने से पहले
सभाएँ करते,
फिर तय होता कि
किस खेत को हरियाली मिलेगी
और किसे सूखे का श्राप।

लेकिन प्रकृति ने
हमसे बड़ी बुद्धिमानी दिखाई है।
नदी सबकी प्यास बुझाती है,
पेड़ सबको छाया देते हैं,
फूल हर आँगन में महकते हैं,
बादल हर धरती पर बरसते हैं,
और आकाश सबके सिर पर
एक-सा फैल जाता है।

प्रकृति का हर कण
चुपचाप यही कहता है—
"मैंने कभी भेद नहीं किया,
मैंने तो केवल देना सीखा है।
फिर इंसान ही क्यों
अपनी ही बनाई दीवारों में कैद है?"

काश,
हम भी नदी से बहना,
पेड़ों से देना,
फूलों से महकना,
और आकाश से सबको समेट लेना सीख जाएँ,
तो शायद
धरती पर इंसानियत का धर्म
सबसे बड़ा धर्म बन जाए॥

50- मुझे ऐसा जहाँ चाहिए

मुझे ऐसा जहाँ चाहिए,
जहाँ इंसान बस इंसान हो,
न कोई ऊँचा, न कोई नीचा,
हर दिल में प्रेम का सम्मान हो।

जहाँ न धर्म की दीवारें हों,
न जातियों की जंजीरें हों,
हर आँगन में विश्वास खिले,
हर राह पर नई तस्वीरें हों।

जहाँ न कोई गरीब कहलाए,
न कोई अमीरी पर इतराए,
रोटी, शिक्षा, स्वास्थ्य, सम्मान—
सबको जीवन का हक़ मिल जाए।

जहाँ बेटी जन्मे तो घर महके,
बेटे जैसा उसका मान हो,
उसके सपनों को पंख मिलें,
हर मंज़िल पर उसका नाम हो।

जहाँ दहेज़ का दानव मर जाए,
रिश्ते सौदों में न तौले जाएँ,
दो दिल मिलें विश्वास लिए,
नोटों से घर न जोड़े जाएँ।

जहाँ भौतिकता की चकाचौंध से
मानवता कभी न हार सके,
करुणा, प्रेम और सत्य की लौ
हर अँधियारे को पार सके।

जहाँ एकता का गीत गूँजे,
समानता का दीप जले,
संवेदनाओं की हर धड़कन
हर सूने मन को छू चले।

जहाँ सम्मान किसी उपाधि का नहीं,
हर श्रमिक के श्रम का हो,
जहाँ किसी की आँख न भीगे,
हर आँसू सबके ग़म का हो।

ऐसा हो मेरा हिंदुस्तान,
ऐसा ही सारा जहान चाहिए—
जहाँ भेदभाव का नाम न हो,
बस प्रेम का संविधान चाहिए।

न तलवारों से जीत मिले,
न नफ़रत की पहचान चाहिए,
मुझे बस इतना-सा सपना है—
हर दिल को दिल का स्थान चाहिए,
मुझे ऐसा ही जहान चाहिए।

51- नींद के उस पार

कुछ भूल गए मुझे,
कुछ ने जान-बूझकर
भुला दिया,
और मैं भी शायद
अपने ही हिस्से की पीड़ाओं से थककर
एक गहरी नींद में
सो गया।

इतनी गहरी नींद
कि समय गुजरता रहा,
मौसम बदलते रहे,
लोग आते-जाते रहे,
रिश्तों के रंग फीके पड़ते रहे—
और मुझे किसी ने
जगा कर नहीं देखा।

अब जब आँख खुलती है,
तो एक नई दुनिया दिखती है...

वही धरती,
वही आसमान,
वही रास्ते—
मगर सब कुछ
पहले जैसा नहीं है।

कुछ चेहरे
अब अजनबी हो गए हैं,
कुछ अपने
यादों की तस्वीर बन गए हैं,
और कुछ रिश्ते
बिना टूटने की आवाज़ किए
बिखर गए हैं।

अब मेरे चारों ओर
सन्नाटा है,
एक लंबी, गहरी ख़ामोशी है,
और उस ख़ामोशी के बीच
बस मैं हूँ...

मैं—
जो कभी बहुत-सी आवाज़ों में
अपनी पहचान खोजता था,
आज अपनी ही साँसों की आहट से
बातें करता हूँ।

कभी-कभी लगता है,
शायद दुनिया ने मुझे
भुला दिया है,
या शायद
मैं ही दुनिया की दौड़ से
बहुत पीछे रह गया हूँ।

लेकिन फिर
इस गहरी ख़ामोशी में
दिल धीरे से कहता है—

अभी सब कुछ समाप्त नहीं हुआ,
जो सो गया था,
वह फिर से जाग सकता है।

शायद यह सन्नाटा
मेरी सज़ा नहीं,
मेरी तैयारी है...

शायद इस नई दुनिया में
जहाँ आज
सिर्फ़ ख़ामोशी है
और मैं हूँ—

कल
मेरी आवाज़ भी होगी,
मेरी पहचान भी होगी,
मेरे अपने भी होंगे...

और शायद
एक दिन
मैं इस नींद के उस पार
ख़ुद को
फिर से पा लूँगा।

52- पुरुष की बेबसी

वह रोता नहीं है अक्सर,
बस चुप हो जाता है,
दिल में उठते तूफ़ानों को
हँसकर सह जाता है।

सबकी ज़िम्मेदारियों का बोझ
अपने कंधों पर रखता है,
घर की हर छोटी-बड़ी चिंता में
खुद को ही भूलता रहता है।

कहते हैं— "मर्द को दर्द नहीं होता,"
इसलिए वह दर्द छुपाता है,
आँखों में आँसू लेकर भी
चेहरे पर मुस्कान सजाता है।

माँ की उम्मीद, पिता का भरोसा,
बच्चों का भविष्य, घर का मान,
इन सबको बचाने की कोशिश में
खुद से हो जाता है अनजान।

जब टूटता है कोई रिश्ता,
तो दोष उसी के हिस्से आता है,
वह अपनी सफ़ाई देने से पहले ही
अक्सर अपराधी कहलाता है।

पुरुष होना आसान नहीं,
हर पल खुद को मज़बूत दिखाना है,
अंदर चाहे कितना भी टूटे,
बाहर मुस्कुराते रह जाना है।

पुरुष भी इंसान है, पत्थर नहीं;
जिसे दुनिया मज़बूत समझती है,
कभी-कभी उसकी बेबसी की
कहानी ज़्यादा दर्दनाक होती है।

सबकी ज़िम्मेदारियों का बोझ
अपने कंधों पर रखता है,
घर की हर छोटी-बड़ी चिंता में
खुद को ही भूलता रहता है।

कहते हैं— "मर्द को दर्द नहीं होता,"
इसलिए वह दर्द छुपाता है,
आँखों में आँसू लेकर भी
चेहरे पर मुस्कान सजाता है।

माँ की उम्मीद, पिता का भरोसा,
बच्चों का भविष्य, घर का मान,
इन सबको बचाने की कोशिश में
खुद से हो जाता है अनजान।

जब टूटता है कोई रिश्ता,
तो दोष उसी के हिस्से आता है,
वह अपनी सफ़ाई देने से पहले ही
अक्सर अपराधी कहलाता है।

पुरुष होना आसान नहीं,
हर पल खुद को मज़बूत दिखाना है,
अंदर चाहे कितना भी टूटे,
बाहर मुस्कुराते जाना है।

उसकी ख़ामोशी कोई कमजोरी नहीं,
वह भी इंसान है पत्थर नहीं,
दुनिया मज़बूत समझती है जिसे,
आईना होकर भी वह टूटता नहीं है।

53- महाभारत एक लघु कथा

धर्म-अधर्म की उलझन में,
जब न्याय मौन हो जाता है,
तब कुरुक्षेत्र की माटी में,
इतिहास लिखा जाता है ।

जब भरी सभा में लाज बची,
बस एक चीर के धागे से,
तब युद्ध बीज बोया गया,
प्रतिशोध भरे अंगारों से ।

ममता अंधी, धृतराष्ट्र मौन,
भीष्म बंधे रह गए वचनों में,
पर न्याय खड़ा था सिसक रहा,
दुर्योधन-शकुनि के कुचक्रों में ।

एक ओर था दंभ खड़ा,
सौ पुत्रों की माया थी,
दूजी ओर खड़े पाण्डव,
जिन पर माधव की छाया थी ।

गांडीव हाथ से छूट गया,
जब अर्जुन अपनों को देखा,
तब बने सारथी कृष्ण ने वहाँ,
बता दी कर्म -धर्म की रेखा ।

"न कोई मरता, न मारता,
बस आत्मा अमर पुरानी है,
तू कर्म किए जा पार्थ यहाँ,
यह तो बस आनी-जानी है ।"

जब बजा शंख, चला चक्र
मची वहां भयंकर भारी मार,
भीष्म गिर गए शरशय्या पर,
द्रोण हो गए रण से बाहर ।

अभिमन्यु फंस गया चक्रव्यूह में
कर्ण ने कर दिया अंतिम दान,
हर लहू की बूंद मांगती थी,
बस अपना खोया सम्मान ।

विजय मिली पांडवों को लेकिन,
जीत कहाँ वह पुनीत पावन थी?
हर आँगन में मातम बिखरा था,
हर आँखें दुःख की बरसात थी ।

सिखा गई यह गाथा हमको,
विवेक जब जब मर जायेगा ,
वहाँ अपनों का ही लहू बहेगा ,
फिर हाथ नहीं कुछ भी आयेगा ।

54- उर्मिला: विरह और त्याग की मूरत

राजभवन के स्वर्ण कक्ष में,
इक दीपक जलता रहता था,
पर उस लौ की ओट में कोई,
चुप-चाप सिसकता रहता था।

रघुकुल की उस वधू ने देखो,
कैसा कठिन विधान चुना,
पति के कर्तव्यों की खातिर,
स्वयं विरह का गान चुना।

जब लक्ष्मण ने 'भ्रातृ-धर्म' की,
मन में थी ठानी तैयारी,
सहज भाव से विदा दे गई,
वह 'जनक-नन्दिनी' सुकुमारी।

न रोकी राह, न माँगा साथ,
न मुख से कोई आह भरी,
कर्तव्य की वेदी पर उसने,
अपनी हर खुशियाँ वार दीं।

"वह सोई नहीं कि लक्ष्मण जागें,
वह जागी नहीं कि नींद सजे,
चौदह वर्षों तक नयनों में,
बस एक विरह की अग्नि जले।"

बिना दोष के वह वनवासी,
महलों के भीतर रही,
आँसू पीकर, अधर सिए वह,
सब कुछ हँसकर सह गई।

न कोई पत्थर, न कोई गाथा,
इतिहासों ने बिसराया उसे,
पर रामराज्य की नींव को देखो,
उर्मिला ने सजाया उसे।

त्याग अगर सीता का पावन,
तो संयम उर्मिला भी महान,
उसके के चरणों में झुकता,
सातों युग का स्वाभिमान।

55- कैकेयी: नियति का कठोर वरदान

दोषी जग की नज़रों में वो,
पर इतिहास कहाँ यह पढ़ पाया,
यदि कैकेयी न होती तो,
राम को किसने भगवान बनाया?

महलों के वैभव में रहकर,
वो बस इक राजा कहलाते,
कौशल्या के राजदुलारे,
मर्यादा पुरुषोत्तम न बन पाते।

कुबड़ी मंथरा तो निमित्त थी,
पीछे छिपी विधाता की माया थी,
राम को ईश्वर सिद्ध करे,
यह रची गई एक छाया थी।

अपने ही आँचल में समेटकर,
जग भर का अपवाद लिया,
बेटे को देकर वन का पथ,
खुद को जीवनभर का संताप दिया।

राजसिंहासन पर बैठकर,
जो काम अधूरे रह जाते,
वन के कँटीले रास्तों पर,
वे दानव सारे मारे जाते।

महलों में कहाँ मिल पाते राम,
शबरी के जूठे बेरों से?
केवट की नैया पार न होती,
जग तर न पाता इन फेरों से।

त्याग, तपस्या, धैर्य और बल,
वनवास ने ही तो सिखलाया,
कठिनाइयों की भट्टी में तपकर,
कंचन सा रूप निखर आया।

परम त्याग की उस देवी को,
इतिहास ने केवल कोसा है,
पर राम जानते थे मन में,
यह नियति का ही भरोसा है।

तभी तो लौटे जब राघव,
पहले कैकेयी के चरण छुए,
जग भले कहे उनको पापी,
पर राम तो बस उनके ही हुए।

श्री जयप्रकाश 'जय'

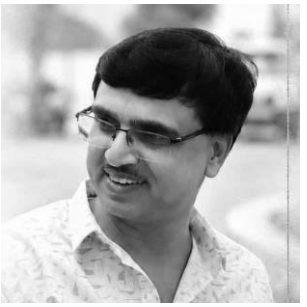

जन्म स्थान : ग्राम चिकलाना, तहसील पिपलोदा, जिला रतलाम (म.प्र.)

पिता : स्व. श्री लालचंद यादव, माता श्रीमती कलावती

जन्मदिन : 17 अप्रैल

शिक्षा : एम. ए. (समाजशास्त्र) ।

रुचि : क्रिकेट और टेबल टेनिस खेलना, संगीत, लेख-कविता लेखन, मोटिवेशनल स्पीकर, कहानी सुनाना ।

साहित्य सृजन: विद्यार्थी जीवन में कॉलेज पत्रिका 'चिंतन' का संपादन तथा 'अनुष्ठान' पत्रिका का सहसंपादन । कविता संग्रह : 'चलो इन्द्रधनुष हो जाएँ' एवं 'दिल चाहता है' प्रकाशित ।

अन्य उल्लेखनीय उपलब्धियाँ अभिव्यक्ति मंच, "The JP Yadav show' एवं जीने की राह शीर्षक से सोशल मिडिया के माध्यम से गीत, कविताएँ, प्रेरक कहानियों को प्रसारित करते हैं, प्रेरणा संवाद कार्यक्रम के माध्यम से हजारों विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को अच्छे भविष्य एवं जीवन के लिए प्रेरित किया ।

सेवाएँ : मध्यप्रदेश शासन के पंचायत और ग्रामीण विकास, सहकारिता, स्कूल शिक्षा, उच्च शिक्षा, तथा जनजातीय कार्य विभाग तथा राष्ट्रीयकृत संस्थान भारतीय जीवन बीमा निगम तथा बैंक ऑफ इंडिया की विभिन्न सेवाओं के लिए चयनित हुए। वर्तमान में संभागीय उपायुक्त, जनजातीय कार्य के पद पर पदस्थ हैं।

प्रतिनिधित्व : मध्यप्रदेश शासन जनजातीय कार्य विभाग के अधिकारी के रूप में दिल्ली, हैदराबाद, उदयपुर एवं चण्डीगढ़, भूवनेश्वर भ्रमण के दौरान विभिन्न कार्यशालाओं, गतिविधियों में म.प्र. शासन का प्रतिनिधित्व किया ।

संप्रति : संभागीय उपायुक्त,

जनजातीय कार्य तथा अनुसूचित जाति विकास

शहडोल संभाग, शहडोल-484001 (म.प्र.)

मो. नं. 7772859301